ISSN 2348-4683
मूल्यः ₹20 मात्र

पाँचवाँ स्तंभ

सकारात्मक चिंतन एवं विकास का संवाहक

जनवरी-मार्च, 2025

वर्ष 15, अंक 155

सं जानीध्वं, सं गच्छध्वम्

साथी की गतिविधियाँ

पाँचवाँ स्तंभ पत्रिका का दसवाँ वार्षिकोत्सव संगोष्ठी आयोजित ''भारतीय संस्कृति के उन्नयन में पत्रकारिता'' (2016)

पाँचवाँ स्तंभ पत्रिका का तेरहवें स्थापना दिवस व महात्मा गांधी की 150वीं जयंती पर राष्ट्रीय गोष्ठी ''पत्रकार महात्मा गांधी'', गुजरात (2018)

14. साथी संस्था द्वारा 24 जून, 2024 को सीनियर सिटीजन सम्मान मुहीम, ओल्ड ऐज होम, फरीदाबद में रह रहे वृद्धजन को वाल्किंग स्टीक, फोल्डींग वाल्कर, बुक्स, डायपर आदि समान ओल्ड ऐज होम की देखरेख कर रहे श्री घनश्याम पाण्डेय (सामाजिक कार्यकर्ता) व एडवोकेट श्री मनोज खन्ना जी के मौजूदगी में साथी संस्था की कोषाध्यक्ष द्वारा दिया गया। 2024

'कुन्ती–विशुद्धानंद पुस्तकालय' को साथी संस्था द्वारा लगभग 500 पुस्तकें दिया गया। (2022)

साथी संस्था व राजमाता विजयाराजे सिंधिया स्मृति न्यास के द्वारा ''बेटी फाउंडेशन'' के तृतीय सामुहिक विवाह समारोह में ''साथी'' संस्था की कोषाध्यक्ष श्रीमती संगीता सिन्हा द्वारा 2100 रुपए की सहायता राषि कन्यादान के रूप में दिया। (2023)

Sustainable & Resilent Communities & SATHI द्वारा Gender Responsive Climate Action सेमिनार में भागीदारी (2023)

साथी संस्था द्वारा 'बाल विकास विद्यालय', सिद्धार्थ कॉलोनी, दिल्ली में 'राखी प्रतियोगिता' आयोजित किया गया साथ ही प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान पर बच्चों को पुरस्कार एवं सभी बच्चों को जूस, बिस्किट एव खाद्य साम्रगी वितरण किया गया।

लोकतंत्र का
पाँचवाँ स्तंभ
सकारात्मक चिंतन एवं विकास का संवाहक

वर्ष 15, अंक, 155, (कुल पेज 40, कवर सहित)

संस्थापक संपादक
स्व. मृदुला सिन्हा

संपादक
संगीता सिन्हा

सलाहकार संपादक
संजय कुमार मिश्र
डॉ. रामशरण गौड़

कला एवं सज्जा
प्रहलाद यादव
नीता राय

संपादन सहयोग
प्रमोद मौर्य

कार्यालय
पी.टी. 62/20, डी.डी. ब्लॉक, कालकाजी,
नई दिल्ली– 110019
इ मेल: panchvan.stambh@gmail.com
editorpanchwastambh@gmail.com
वेबसाइट : www.sathilive.com
संपर्क : 9868010452, 9555194261

शुल्क
एक अंक : ₹20
वार्षिक : ₹220
पाँच वर्षीय : ₹1000
आजीवन के लिए : ₹2500

समस्त चेक/बैंक ड्राफ्ट/मनीऑर्डर,
पाँचवाँ स्तंभ (Panchwa stambh)
नई दिल्ली के नाम स्वीकार्य होंगे।

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी
श्रीमती मृदुला सिन्हा द्वारा,
पी.टी. 62/20, कालकाजी,
नई दिल्ली–110019
से प्रकाशित तथा
एना प्रिंट ओ ग्राफिक्स प्रा.लि.
347–के, उद्योग केन्द्र एक्सटेंशन.II,
सेक्टर–ईकोटेक-II, ग्रेटर नोएडा,
गौतमबुद्ध नगर, उ.प्र. से मुद्रित

सं जानीध्वं, सं पृच्छध्वम्

'साथी' (सोशल एक्शन थ्रू इंटिग्रेटेड नेटवर्क) का मासिक प्रकाशन

पाँचवाँ स्तंभ में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखकों के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। सभी कानूनी विवादों का निपटारा दिल्ली न्यायालय की अधिकारिता में।

अन्दर के पन्नों पर

मंथन 04

वसंत विशेष
वसंत मेरे द्वार
विद्यानिवास मिश्र 06

सरोकार
हाशिए में अब नहीं
डॉ. मृणालिका ओझा 08

बढ़ रहा है भाषाओं के लुप्त होने का संकट
प्रमोद भार्गव 11

किताबों से युवा पीढ़ी की लगातार बढ़ती दूरी चिंताजनक
शैलेन्द्र चौहान 14

अभिनव सरकारी प्रयास
ग्रामीण भारत की कहानी बदल रही है स्वामित्व योजना
डॉ. सत्यवान सौरभ 17

परीक्षा पे चर्चा
परीक्षा का उद्देश्य समग्र ज्ञान और विकास होना चाहिए : नरेन्द्र मोदी 19

विश्व रेडियो दिवस
संचार और जागरूकता का प्रभावी माध्यम
प्रमोद मौर्य 21

कविताएँ
सुशांत सुप्रिय की कविताएँ 24

साजन! होली आई है!
फणीश्वर नाथ रेणु 10

नदी हूँ
डॉ. निर्मल प्रवाल 20

कहानी
सुरजा
दिविक रमेश 25

लघु कथा
कभी तो लहर आयेगी
डॉ. निर्मल प्रवाल 31

संस्कार प्रवाह
चंदन वन का कवि-सम्मेलन
लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव 29

सभ्यता का केन्द्र
अयोध्या : प्राचीन से अर्वाचीन तक
डॉ. विनोद कुमार सिन्हा 32

हिंद स्वराज
महात्मा गांधी 35

किस्त-दर-किस्त
संजय कुमार मिश्र 38

रंग, उत्सव और हम!

वह जगह देखना कितनी उत्सुकता भरा हो सकता है, जहाँ भूरे और हल्के रंग की दो जल धाराएँ अलग-अलग से आकर मिलती हैं, इसे खुली आँखों से देखा जा सकता है।

कहीं सूखकर गिर रहे
सिर झुका अपत पेड़,
और कहीं सिर उठाए चली आ रही
नई स्वाभिमानी स्वर्णिम कोपलें।
यही ऋतु है,
ऋतु का अवकाश।

—बलदेव वंशी

बसंत उत्सव का प्रतीक है। फूल खिलते हैं, पक्षी गीत गाते हैं, सब हरा हो जाता है। जैसे बाहर बसंत है, ऐसे ही भीतर भी बसंत घटता है और जैसे बाहर पतझर है, वैसे ही भीतर का भी पतझड़ है। पतझड़ है तो अहंकार बच सकता है, न पत्ते हैं, ना फूल हैं, न पक्षी हैं, न गीत हैं, और बसंत आए कि गए तुम! तुम खाली जगह करो, तो बसंत आता है। तुम मिटो, तो फूल खिलते हैं। ऋतुराज हमें संदेश देता है, प्रकृति के स्वर से स्वर मिलाने का और ऐसा करते हुए, हम सब उत्सवमय हो जाते हैं। बसंत से जुड़ा उत्सव भारत के अनेक क्षेत्रों में 'बसंत पंचमी' से 'रंग पंचमी' तक मनाया जाता है। गायन वादन की परंपरा लिए यह उत्सव समाज को जोड़ता है, तनाव और उदास चेहरों पर रंग मलता है। होली का त्योहार एक ऐसा ही अवसर है, जब हम अच्छी मेल-जोल भरी शुरुआत कर सकते हैं। शायर ने कल्पना की है- रंग बातें करें और बातों से खुशबू आए..., सचमुच रंगों का हमारे मन-मस्तिष्क पर गहरा असर पड़ता है, रंगों की ये ताकत कई सारी बिमारियों को भी ठीक कर सकती है। फिलहाल होली के रंगों की बात करें, तो ये त्योहार रंगों से मनाया जाने वाला एक बाहरी उत्सव भर नहीं है, ये असल में आंतरिक उत्सव भी है, होली के पहली रात में जलने वाली होलिका जीवन से बोझिलता को भस्म कर देने का प्रतीक है, तो होली का दिन रंगों के साथ जीवन में एक नये आनंद से खिल उठने का। रंगों के साथ जीवन एक उत्सव बन जाता है और हमारी भावनाएँ रंगों की फुहार-सी बनकर, अपने आसपास के जीवन में रंग भर देती हैं।

वह जगह देखना कितनी उत्सुकता भरा हो सकता है, जहाँ भूरे और हल्के रंग की दो जल धाराएँ अलग-अलग से आकर मिलती हैं, इसे खुली आँखों से देखा जा सकता है। इस दृश्य को कुछ दूर तक पानी में बनती रेखा स्पष्ट कर देती है। यह मिलन गंगा और यमुना का है। ऐसा स्थान प्रयागराज है, जहाँ 12 वर्ष बाद फिर से कुम्भ मेला के आयोजन के साथ इस साल 2025 की शुरुआत हुई। पौराणिक मान्यता के अनुसार यहाँ गंगा, यमुना के मिलन में सरस्वती नदी भी शामिल है, जो दिखाई नहीं देती, कहते हैं, वह जन-आस्था में है। इसलिए उसे अंतः सलीला भी कहा गया है। जहाँ तीन नदियाँ मिलती हों, वहाँ आस्थावान लोगों का स्नान अति पावन कहा गया है। इस साल जनवरी की 13 तारीख को पौष पूर्णिमा पर पुण्य की डुबकी के साथ महाकुम्भ 2025 का शुभारंभ हो गया, जितनी उम्मीद थी, उससे कहीं अधिक आस्थावान संगम में डुबकी लगाने को उमड़े। भोर से कड़ाके की ठंड और घने कोहरे के बावजूद श्रद्धालुओं की भीड़ संगम की ओर उमड़ी और ये सिलसिला 26 फरवरी तक चलता रहा। गाते कीर्तन मंडलियाँ अध्यात्म के मेले में रंग भरती रहीं। देश ही नहीं विदेशों में भी एकता के महाकुंभ की चर्चा खूब हुई। महाकुम्भ में शाही स्नान का अपना आकर्षण होता है, जहाँ माता-पिता और खुद का पिंडदान कर सन्यासी बने विभिन्न अखाड़ों के नागा संन्यासी महाकुम्भ के अमृत स्नान में माँ गंगा से मिलने की खुशी में पूरी तरह सज-संवरकर शृंगार कर निकलते हैं। महाकुम्भ में श्रद्धालु कल्पवास करते हैं, जिसमें पूरे एक महीने तक संगम तट पर रहकर वेदाध्ययन, ध्यान, पूजा में सम्मिलित रहते हैं। महादेवी वर्मा की लिखी एक रेखाचित्र 'ठकुरी बाबा' में इस कल्पवास का जो चित्रण है, उसे पढ़कर कुम्भ मेले का परिवेश अनूठा लगता है।

साल के 365 दिन और दिन के घंटे 24 इसी के बीच मनुष्य ने अपने जीवन की दिनचर्या बनाई। रोज के कार्यों को अलग-अलग समय में बाँटा, ताकि वह एक अच्छी दिनचर्या निभाते हुए, उत्कृष्ट जीवन शांति से बिता सके। अपने कर्त्तव्यों, अपनी जिम्मेदारियों का निर्वाह कर सके। भरण-पोषण के साथ-साथ अपना मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य का भी ध्यान रख सके। हमने एक सुंदर समाज बनाने के क्रम में इस समाज के कुछ नियम बनाए, ताकि सामाजिकता बची रहे, लेकिन हाल-फिलहाल के एक वक्तव्य ने हम सबको चर्चा का एक गहन विषय दे दिया है, "हमें काम कितने घंटे करना चाहिए?" एक कंपनी चाहती है कि उसके कर्मचारी 70 घण्टे काम करें, दूसरी चाहती है कि इसे बढ़ा कर 90

घण्टे कर दिया जाए, सभी चाहते हैं कि उनके कर्मचारी कड़ी मेहनत करें ताकि कम्पनी और ज्यादा मुनाफा कमा सके। ये भी कहा गया कि घर में पत्नि को कितना निहारोगे? पत्नि को निहारने की बात पर मुझे शायद ये कहना पड़ेगा कि शादी के कुछ सालों को छोड़ दें, तो किसे अपनी पत्नी को निहारने का समय मिलता है? बच्चे हैं, घर में बुजुर्गों की देख-रेख की जरूरत पड़ती है। परिवार को समय देना होता है, परिवार जो कि भारतीय संस्कृति की धुरी है, जो कड़ी-कड़ी जुड़कर एक सुंदर समाज का निर्माण करती हैं। दूसरी बात जिन्हें निहारने की बात की जा रही है और वह खुद काम के घंटों में उलझी हुई हैं, उसकी स्थिति और ज्यादा दयनीय है। महिलाओं को प्रकृति और समाज ने बच्चों के साथ-साथ घर संभालने की खास जिम्मेदारी दी है, मुझे यह कहने में बिल्कुल भी संकोच नहीं कि अब हमने स्कूल ड्रॉपआउट जैसे समस्या पर काफी चर्चा कर ली है। अब ऑफिस ड्रॉपआउट की बात करनी ही पड़ेगी खास तौर पर महिलाओं के संदर्भ में। 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' के नारे से अब थोड़ा और आगे बढ़ने की जरूरत है, हमने बेटियों को काफी हद तक बचाया है। उन्हें पढ़ाया लिया, उनकी महत्त्वाकांक्षाओं को पंख भी दिए हैं, लेकिन शादी और बच्चों के बाद ज्यादातर महिलाओं को नौकरी छोड़नी पड़ती है। समस्या वही काम के घंटे और इस समस्या का अगर हल नहीं ढूँढ़ा गया तो आने वाले समय में माता-पिता अपनी बेटियों को पढ़ाने-लिखाने में शायद उत्साह न दिखा पाएँ। 8 मार्च को हमें "अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस" के रूप में मनाते हैं। इस दिन का महत्त्व इसी बात से है कि महिलाएँ अपनी मुश्किलों का हल ढूँढ़ें और अपनी समस्याओं पर अपनी आवाज बुलंद करे। वह समाज में अपनी भागीदारी निभा सके, आत्मविश्वास के साथ आत्मनिर्भर बने। इस अभियान में वह समाज के दूसरे वर्गों से भी कुछ अपेक्षाएँ रखती है।

राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग के अध्ययन से एक चौंकाने वाली बात सामने आई है कि भारत के एक राज्य के 60 प्रतिशत किशोर रील्स बनाने में 4-5 घंटे बरबाद कर रहे हैं। 150 दिनों तक दो लाख 56 हजार किशोरों पर अध्ययन कर यह बात सामने आई है। इस रिपोर्ट की मानें तो पढ़ाई की उम्र में बच्चे बिना मतलब के रील्स बनाकर सोशल मीडिया पर अपलोड कर रहे हैं। वहीं पोस्ट करने के बाद उसे कितने लोगों ने देखा और फॉलो किया, इसमें समय बरबाद कर रहे हैं। अगर आज इन बातों पर ध्यान नहीं दिया गया, उन्हें समय प्रबंधन नहीं सिखाया गया तो आने वाले समय में जब वे किसी कंपनी के कर्मचारी बनेंगे तो उन्हें क्या ये काम के घंटे की धारणा समझ में आएगी? सोशल मीडिया के अपने फायदे हैं, लेकिन इसका इस्तेमाल कौन कितना कर रहा है? क्या कर रहा है? इस पर भी अंकुश लगना जरूरी है।

शेक्सपियर ने कहा, 'बातचीत प्रिय हो, ओछी न हो, चुहल हो तो बनावट लिए न हो, स्वच्छंद हो पर अश्लील न हो, विद्वत्तापूर्ण हो पर दंभयुक्त न हो, अनोखी हो पर असत्य न हो।' इन बातों को कहने वाले, लिखने वालों ने बस ये सब यूँ ही नहीं कह दिया। हमें समाज के विकास यात्रा के विभिन्न पड़ावों, मुश्किलों और अनुभवों ने, ये बातें सिखाई है। कई बार इन बातों को परखा गया होगा, तब कहीं जाकर ये पंक्तियाँ लोग बरसों से दोहरा रहे हैं। दूसरों के अनुभवों से सीख लेने वाले बुद्धिमान होते हैं। अकसर लोग कहते हैं कि हमें अपनी बात बिना किसी लाग-लपेट के निडर हो के कहनी चाहिए, ठीक भी

राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग के अध्ययन से एक चौंकाने वाली बात सामने आई है कि भारत के एक राज्य के 60 प्रतिशत किशोर रील्स बनाने में 4-5 घंटे बरबाद कर रहे हैं। 150 दिनों तक दो लाख 56 हजार किशोरों पर अध्ययन कर यह बात सामने आई है।

है, हम कभी-कभी अपने मन की बात जो सही हो फिर भी कहने की हिम्मत नहीं जुटा पाते, लेकिन कई बार हम अपनी सीमा भूल जाते हैं। कुछ दिनों पहले एक चैनल पर एक इन्फ्लुएंसर की कही हुई अश्लील वक्तव्य पर लोगों ने अपनी नाराजगी जाहिर की है। बोलने की स्वतंत्रता तभी तक उचित हो सकती है, जब तक आप दूसरे की स्वतंत्रता पर कुठाराघात न करें। बात सामने निकलकर आई कि वह एक विदेशी कार्यक्रम की नकल थी, अब नकल में अक्ल की बात ऐसे ही नहीं कही जाती। हमारे देश की संस्कृति संस्कार मायने रखते हैं। हास्य का भी अपना संस्कार होता है। गरिमा होती है। हम सालों से एक अप्रैल को 'मूर्ख दिवस' मनाते रहे हैं। चार्ली चैपलिन तो बिना बोले अपने हाव-भाव से ही लोगों को हँसी से लोटपोट कर देते थे, लेकिन आज कॉमेडी के नाम पर फूहड़ता और गाली-गलौज पर हँसी आए तो हमें एक बार सोचना होगा। हमें मालूम है कि कुछ युवाओं को यह सब शायद अच्छा लगता हो या ऐसी बातें स्वतंत्रता, स्वच्छंदता का पर्याय लगता हों, जिसके लिए वे बहुत सजग भी हैं, लेकिन उन्हें समझना होगा कि किसी भी हास्य पटकथा की हद भी उन्हें ही निर्धारित करनी पड़ेगी। हालाँकि उस हास्य कलाकार ने माफी भी माँगी है, ये अच्छी बात है। युवा देश के भावी नागरिक हैं, उन्हें अपने आज से कल को सँवारना है, उन पर संस्कृति को संवारने, निखारने की जिम्मेदारी ज्यादा रहेगी।

परीक्षाओं के दिन हैं, अभिभावक और परीक्षार्थी दोनों ही एक साथ जुटे हैं, ताकि जीवन के एक और पड़ाव को पार कर सकें। प्रधानमंत्री मोदी जी ने भी परीक्षा पर चर्चा की है। इस अंक में उसके कुछ मुख्य अंश हम प्रकाशित कर रहे हैं, ताकि परीक्षा देने वाले और उनका परिवार इसे तनाव न समझकर उत्सव मानें। उन्हें हमारी तरफ से ढेरों शुभकामनाएँ।

रंगोत्सव की शुभेच्छा देते हुए कुछ गीत की पंक्तियाँ याद आ रही हैं, मैं तो खेलूँगी श्याम संग फाग... और आपको भी कुछ याद आये तो होली पर गुनगुना लीजिएगा।

संगीता सिन्हा

वसंत मेरे द्वार

विद्यानिवास मिश्र

इन अनेक उत्पातों के पीछे कोई छिपी शक्ति काम कर रही है, उसी का नाम वसन्त है। लोग इसे मदन महीप का उत्पाती बालक बताते हैं

लोगों ने सुना, फागुन आ गया है। फागुन आया है तो वसन्त भी आया होगा, फूलों के नए पल्लवों का ऋतु-चक्र मुड़ा होगा। पर सिवाय इसके कि कुछ पेड़ों की पत्तियाँ बड़ी निर्मोही हो गई हैं अपनी डाल पर रुकती नहीं, पेड़ की छाया तक भी नहीं रुकती, भागती चली जाती है और कोई संकेत यहाँ बड़े शहर में फागुन का या वसन्त का मिलता नहीं। क्या निर्मोहीपन को ही वसन्त मान कर वसन्त का स्वागत करें या इसे कोसें, फिर तुम आ गए। तुम आते हो कितना कुछ गवाँ देना पड़ता है, पास से और कुछ भी हाथ में हासिल नहीं आता। राग की ऋतु हो, कितना विराग दे जाती हो, अपने आप से। ब्रजभाषा के किसी कवि ने ऐसा ही प्रश्न किया था :

झूरि से कौन लये बन बाग,
कौने जु आयन की हरि भाई।
कोयल काहें कराहित है बन,
कौन धौं, कौन ने रारि मचाई।।
कौन धौं कैसी किसोर बयारि बहै,
कौन धौं कौन ने माहुर जाई।
हाय न कोऊ तलास करै,
या पलासन कौन ने आगि लगाई।।

यह क्या हुआ है, किसने बन बाग झुलसा दिए, सब नंगे ठाठरी-ठाठरी रह गए, किसने आमों की हरियाली हर ली। किसने यह उपद्रव किया कि 'बन बन' कोयल कराहती रहती है। कैसी तो जाने मारू हवा बही, किसने इसमें जहर घोल दिया। कोई तलाश करने को भी तैयार नहीं कि किसने ढाक वनों में आग लगाई?

इन अनेक उत्पातों के पीछे कोई छिपी शक्ति काम कर रही है, उसी का नाम वसन्त है। लोग इसे मदन महीप का उत्पाती बालक बताते हैं, बाप से एक सौ प्रतिशत ज्यादा ही उत्पाती। पर मदन तो काम का देवता है, मन के देवता चन्द्रमा का मित्र है। वह क्यों इतना उन्मन करता है। चाह पैदा करने का मतलब यह तो नहीं तो चाहने वाला मन ही न रहे।

इस वसन्त से बड़ी खीझ होती है, इतना सारा दुःख चारों ओर, दरिद्रता चारों ओर, दरिद्रता बाहर से अधिक भीतर की दरिद्रता का ऐसा पसारा है, इन सबके बीच क्यों एक अप्राप्य सुख की लालसा जगाने आता है। क्या वसन्त कोई विदूषक है, पुराने विदूषकों का नाम वसन्त इसीलिए हुआ करता था? क्या वसन्त कोई कापालिक है, लाल-लाल गुरियों की माला पहने, हाथ में कपाल लिए आता है, कन्धे पर एक लाल झोली लटकी रहती है, उसी में नए फूल, नए पल्लव, नई प्रतिमा, नई चाह, नई उमंग सब बटोरकर चला जाता है। फिर साल भर बाद ही लौटता है, कुछ भी लौटता नही, बस बरबस सम्मोहन ऐसा फैलाता है कि सब लुटा देता है। फूल और रस वह लाल लाल आँखें लिये अट्टहास करता चला जाता है? या वसन्त यह सब कुछ नहीं, निहायत नादान सा शरारती छोकरा है, जिसे कोई विवेक नहीं, किसी के सुख दुख की परवाह नहीं खेल खेल में जाने कितने घर बन और कितने बन घर करता हुआ निकल जाता है धूलि भरी आँधियों के बगूलों के बीच से किधर और कब, कोई नहीं जानता?

या वसन्त कुछ नहीं, विश्व की विश्व में आहुति जिस आग में पड़ती हैं, उसका ईंधन है सूखी लकड़ी है, तनिक भर में धधक उठती है, बस एक चिनगारी की लहक चाहिए, तनिक सी ऊष्मा कहीं से मिले, निर्धूम आग धधक उठती है, समष्टि की आकांक्षा को ग्रसने के लिए लपलपाती हुई। वसन्त केवल उपकरण है, उसमें कुछ अपना कर्तृत्व नहीं। मैं तब सोचता हूँ। शायद यह सबकुछ नहीं, केवल छलावा है मन का भ्रम है, कोई वास्तविकता नहीं। पत्तों के झरने से फूलों के खिलने से वसन्त का कोई सरोकार नहीं, ये सब पौधे के पेड़ के धर्म हैं वसन्त कोई ऋतु भी नहीं है, गीली है

या सूखी। मौसम खुला है या बादलों से घिरा है। वसन्त यह कहाँ से आ गया? कवियों का वहम है और कुछ नहीं। यह वहम ही लोगों के दिमाग में इतनी सहस्रत्राब्दियों से चढ़ गया कि इतना बड़ा झूठ सचाई बन गया है और हम वसन्त से खीझते हैं, पर उसकी प्रतीक्षा भी करते हैं। मानुष मन चैन के लिए मिला नहीं, अकारण किसी भी मधुर संगीत से, किसी भी आकर्षक दृश्य से खींचकर वह कहाँ से कहाँ चला जाता है, आधी रात कोयल की विह्वल पुकार पर वह सेज से उठ जाता है, अमराइयों में अदृश्य के साथ अभिसार के लिए निकल पड़ता है।

जाने संस्कृतियों ने कितने मोड़ बदले, मनुष्य जाने कहाँ से कहाँ पहुँचा, मन आदिम का आदिम रह गया, वह एक साथ फुलसुंघनी चिड़िया, बिजली की कौंध, तितली की फुरकन, गुलाब की चिटक, स्मृति की चुभन, दखिनैया की विरस बयार, कोयल की आकुल कुहक, सुबह की अलसाई सिहरन, दिन का चढ़ता ताप, नए पल्लवों की कोमल लाली, पलास की दहक, सेमल के ऊपर अटके हुए सुग्मों के नरौश्मय निर्गमन, यह सब है और इसके अलावा भी अनिर्वचनीय कुछ है। वह सदा किशोर रहता है, इसीलिए वह इतना अतर्क्य बना रहता है। यह वसन्त निगोड़ा उसी मन से कुछ साँठगाँठ किए हुए है। इसीलिए सारी परिस्थितियाँ एक तरफ और वसन्त का आगमन एक तरफ वसन्त से मेरा तात्पर्य एक दुर्निवार उत्कंठा से है। जो सब कुछ के बावजूद मनुष्य के मन में कहीं दुबकी रहती है, यकायक उदग्र हो उठती है, कहाँ से सन्देश आता है, कौन बुलाता है, कोई नहीं जानता। कौन बसन्ती रास के लिए वेणु बजाता है, उसका भी कुछ पता नहीं।

सब कुछ तो अगम्य है। इस अगम्य अव्यक्त से यकायक एक दिन या ठीक कहें एक रात कोयल कुहक उठती है और मन सुधियों के जंगल में चला जाता है। इस जंगल में कितनी तो अव्यक्त इच्छाओं के नए उकसे पत्र कुड्मल हैं कितने संकोच के कारण वचनों के सम्पुटित कर्ले हैं कितनी अकारण प्रतीक्षा के दूभर क्षणों की सहमी वातास है, कितनी भर आँख न देख पाने वाली अधखुली आँखों की लालसा की लाल डोरियाँ हैं और कितना सबकुछ देने की उन्मादी चाँदनी का लुटना है। हाँ, इस जंगल में अमराई की आधार भी है, जगह जगह मधुक्खियों की भिनभिनाहट भी है, बँसवारियों की छोर भी है, जाने कितने खुले एकान्त भी हैं। इस जंगल में निकल जाएँ तो फिर मन किसी को कहीं का नहीं रखता न घर का न वन का। यह मन केवल विराग का राग बनकर फैलना चाहता है, कभी फैल पाता है कभी नहीं।

यह मन चिन्ता नहीं करता कि हमें फल का रस मिलेगा या नहीं। वह फूल के रस का चाहक है। बाउल गीतों में मिलता है कि फल का रस लेकर हम क्या करेंगे। हमें मुक्ति नहीं चाहिए। हमें रसिकता चाहिए। रस दूसरों के लिए होता है न। हमें वह पराया अपना चाहिए। अपने का अपना होना क्यों होना है, पराए का अपना होना होना है। पराया भी कैसा जो परायों का भी पराया है, परात्पर है। उसका अपना होने के लिए सब निजत्व लुटा देना है, सब गन्ध रूप रस गान लुटा न्योछावर कर देना है।

वसन्त आता है, तो अनचाहे यह सब स्मरण आ जाता है और एक बार और वसन्त को कोसता हूँ। बन्धु तुम क्यों आए अब तो मुझे चैन से रहने दो घरूपन, अब क्यों अपनी तरह बनजारा बनाने के लिए आ जाते हो। अब मधुबन जाकर क्या करूँगा। मधुवन है ही कहाँ? क्यों रेतीले ढूहों में भटकने के लिए उन्मन करते हो? मैं क्या इतना अभिशप्त हूँ कि वसन्त मेरे दरवाजे पर दस्तक दे देता है। मुझे उसकी प्रतीक्षा भी तो नहीं, यह सोचता हूँ तो लगता है यह मेरे उन संस्कारों का अभिशाप है, जो विनाशलीला के बीच अँधियारे सागर में बिना सूर्य के निकले सृष्टि का एक कमलनाल उकसा देता है। उसमें से स्रष्टा निकल पड़ते हैं। वसन्त स्वयं भी संहार में सृष्टि है। निहंगपन में समृद्धि का आगमन है, अनमनेपन में राग का अंकुरण है, जड़ता में ऊष्मा का संचार है। इसी से उसके दो रूप हैं– मधु और माधव। फागुन मधु है, मधु तो क्या, मधु के आस्वाद की लालसा है और माधव लालसाओं का उतार है।

> **यह मन चिन्ता नहीं करता कि हमें फल का रस मिलेगा या नहीं। वह फूल के रस का चाहक है। बाउल गीतों में मिलता है कि फल का रस लेकर हम क्या करेंगे। हमें मुक्ति नहीं चाहिए। हमें रसिकता चाहिए।**

चैत पूरा का पूरा ऐसे माधव की बिरह-व्यथा है, जो माधव को मथुरा में चैन से नहीं रहने देती है। माधव व्यग्र हैं, राधा माधव के लिए व्यग्र नहीं है। राधा माधव हो गई है, माधव से भी अधिक माधव की चाह हो गई है। उन्हें माधव की अपेक्षा नहीं रही। यह वसन्त राधा माधव के बीच ही ऐसा नहीं करता। समूची सृष्टि में, जो स्त्री तत्व और पुंस्तत्व से बनी है, ऐसे ही कौतुक करता है। एक सनातन आकुलता और एक सनातन चाह में मनुष्य के मन को बाँट कर फिर उन्हें मथता रहता है। मनुष्य के भीतर का मनुष्य नवनीत बन कर, नवनीत पिंड बनकर, नवनीत पिंड का चन्द्रमय रूपान्तर बनकर अँधेरी रातों को कुछ प्रकाश के भ्रम में बिहँसित करता रहता है। वसन्त और कुछ नहीं करता, बस कुछ को न-कुछ और न-कुछ को कुछ करता रहता है। बार बार बरजने पर भी मानता नहीं। वसन्त की ढिठाई तो वानर की ढिठाई भी पार कर जाती है। कोई हितु है, जो इसे रोक सके? मैं जानता हूँ कोई नहीं होगा, क्योंकि दिन में तो हवा की सवारी करता है। रात में चाँद की सवारी करता है। वह कहाँ रोके रुकेगा।

तो फिर आ जाओ अनचाहे पाहुन, आओ भीतर कुछ क्षण आ जाओ, इन कागदों के पत्रों के बीच आ जाओ, इन्हें ही कुछ रंग दो, सुरभी दो, गरमाहट का स्पर्श दो, स्वर दो, ये पत्ते प्राणवन्त हो जाएँ, भले ही अपने को गला दें, जला दें, कुछ नए बीजों को अँखुआने की ऊष्मा तो दे दें।

(साभार)

हाशिए में अब नहीं

डॉ. मृणालिका ओझा
साहित्यकार

आज पुनः अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस मनाने के लिए पूरा विश्व तैयार है। सच यह है कि नारी चाहे जितनी ऊँचाई और वैश्विक स्तर पर पहुँच जाए, जब तक पुरुष उसे पूर्णतः भयमुक्त नहीं करता, तब तक मनुष्य समाज का यथोचित् विकास पूर्ण नहीं होगा। किसी कवि ने कहा है -

'आज नहीं तो कल लिखेंगे,
हर मुश्किल का हल लिखेंगे।'

अगस्त सन् 1910 में अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस मनाना तय हो चुका था। महिलाओं को समानता, अधिकार व सम्मान प्राप्त हो सके, इसके लिए कोपेनहेगन में कुछ समाजवादी राष्ट्रों के सम्मेलन में इसे तय किया गया था। इसका मुख्य उद्देश्य सामाजिक रूप से लैंगिक आधार पर होने वाले मतभेदों को समाप्त करना था। 19 मार्च, 1911 में जर्मनी, स्विट्जरलैंड, डेनमार्क, ऑस्ट्रिया जैसे कुछ देशों में इसे पहली बार मनाया गया। 1913 में फरवरी माह के अंतिम रविवार को यह रूस में मनाया गया। 1914 से अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस 8 मार्च को प्रतिवर्ष नए-नए उद्देश्यों के साथ मनाया जाने लगा। इसको अनेक देशों ने अपनाया। 1917 में महिलाओं ने अपनी शक्ति व महत्त्व का प्रयोग करते हुए प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति के लिए माँग की और उसे 'रोटी व शांति' का नाम दिया। सचमुच विश्व को विनाश से बचाने के लिए महिलाओं का यह सबसे महत्त्वपूर्ण प्रयास था। तब से आज तक महिलाओं के लिए समानता व सम्मान की लड़ाई लगातार जारी है। कुछ देशों में बहुत हद तक इस उद्देश्य की पूर्ति हो रही है। ध्यातव्य है कि हर वर्ष एक उद्देश्य के साथ महिला दिवस मनाया जाता है। वर्ष 2023 की थीम जहाँ 'लैंगिक समानता' थी, वहीं 2024 की थीम 'महिलाओं में निवेश करें और प्रगति में तेजी लाने' पर आधारित है। वर्ष 2025 की थीम का उद्देश्य 'एकजुटता से आगे बढ़ना और महिलाओं की समानता को गति देना' है।

आमतौर पर सच यह है कि महिला, माँ हो या पत्नी, लगभग 24 घंटे परिवार और समाज के लिए समर्पित रहती है। वह एक बिना अवकाश एवं पगार की अनेक पदों का प्रबंधन सँभालती हुई कर्मचारी है। विश्व के किसी भी देश, समाज और

आमतौर पर सच यह है कि महिला, माँ हो या पत्नी, लगभग 24 घंटे परिवार और समाज के लिए समर्पित रहती है। वह एक बिना अवकाश एवं पगार की अनेक पदों का प्रबंधन सँभालती हुई कर्मचारी है।

परिवार के निर्माण में महिलाओं की अहम भूमिका होती है। यह बेहद सम्मानजनक दायित्व है, जिससे महिलाएँ पूर्णतः समर्पित भाव से निभाती है। इस आधार पर यह बात तय हो जाती है कि महिला को सामान्य या सहानुभूतिपूर्ण अधिकार नहीं, बल्कि सम्मानजनक अधिकार चाहिए। सच यह भी है कि उसके सामाजिक, पारिवारिक अधिकार पुरुष से अधिक स्वयंसिद्ध हो जाते हैं। इसके ठीक विपरीत, यह भी हम जानते हैं की आदिकाल से अब तक महिलाएँ भेदभाव की शिकार होती आई हैं। पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक दृष्टि से भी महिलाएँ यंत्रणाओं की त्रासदी झेलती रही हैं। आदिम या पिछड़े समाजों में यह बात उतनी लागू नहीं होती, जितनी तथाकथित सभ्य समाज में। छत्तीसगढ़ में कुछ आदिम जातियाँ तो ऐसी हैं कि घर में बेटी पैदा न हो तो उसे पाप का परिणाम मानती हैं और बेटी पैदा होने पर उत्सव भी मानती हैं। यह छत्तीसगढ़ के साथ ही संपूर्ण मानव समाज के लिए बड़े गर्व का विषय है। ध्यातव्य ये है कि जो लैंगिक आधार पर महिलाओं को प्रताड़ित करते हैं, वे अपेक्षाकृत सभ्य व अभिजात हैं, जो हद से गुजर चुके हैं। उनकी दृष्टि में अगर शादी के बाद बच्चे नहीं होते, तो महिला दोषी, अगर बेटा नहीं तो महिला दोषी, पति नहीं तो भी महिला ही दोषी, घर में अनर्थ हुआ तो भी महिला दोषी। धार्मिक सामाजिक नियम भंग हो तो भी महिलाएँ ही जिम्मेदार। दहेज के नाम पर आज भी महिलाओं को सताया जाता है। 'टोनही और डायन' के नाम पर बेहद अमानुषिक सजाएँ दी जाती हैं। यहाँ तक कि निर्वस्त्र कर घुमाए जाने के समाचार भी सुनाई पड़ जाते हैं। अब तो कहीं दया, कहीं सहानुभूति-सहयोग, कहीं खौफ दिखाकर उनकी आबरू से खिलवाड़ किया जा रहा है। नौकरी और व्यवसाय के क्षेत्र में भी कई बार उनकी विवशता या मजबूरी को भुनाया जाता है। इन हरकतों से पुलिस अधिकारी या नेता या अन्य कई वर्ग भी पूर्णतः अछूता नहीं रहा है। आदिकाल से अब तक युद्ध के सर्वाधिक दुःखद परिणाम भी महिलाएँ ही झेलती आ रही हैं। वे चाहे सती हों, जौहर हों, या उनका हरण हो। समस्याएँ अभी तक निर्मूल नहीं हुई हैं।

दूसरी और सामाजिक दृष्टि से देखें तो बाल विवाह और बाल वैधव्य की पीड़ा भी औरतें ही झेलती आई हैं। बच्चा न होने पर सौतन की सजा और दर्द भी औरत ही झेलती है। 'बाँझ' की गाली भी औरत को ही दी जाती है। वह आदिकाल से बेची, खरीदी और निर्वासित भी की जाती रही है। आश्चर्य यह भी है कि लगभग सभी धर्म ने अपने ईश्वरीय स्वरूप में महिला-पुरुष समानता को ही महत्त्व दिया है। उसे रूपांतरित करके, आडंबरों को जोड़ा गया है। स्त्री के अधिकारों का हनन किया गया, उसके वात्सल्य और प्रेम का गलत फायदा उठाकर उसे कमजोर बनाया गया और बँधुआ मजदूर की तरह उसका उपयोग किया गया। विवाह के लिए जब कन्या तलाशी जाती है तब उसकी कसौटियाँ ही देखें- प्राचीन काल में कुल-खानदान के नाम और धार्मिकता के आधार पर। फिर कुछ समय बाद सिलाई-बुनाई, गृहकार्य में दक्षता को आधार माना गया। कालांतर में थोड़ी पढ़ाई-लिखाई और खूबसूरती तलाशी गई। वर्तमान समय में तो हद हो रही है पढ़ी-लिखी भी हो, कमाई वाली भी हो, घर-परिवार को भी निभाए, खूबसूरत भी हो, पारंपरिक, सामाजिक और गोरी भी। आधुनिक भी हो और धार्मिकता भी निभाए। विदेशी कंपनियों ने उसमें अब 'गोरापन' और 'जीरो साइज' तथा फिटनेस पर्सनैलिटी भी जोड़ रखा है। इसी नाम पर कंपनियाँ करोड़ों रुपए कमा रही हैं और भारतीय नारी के जीवन में समस्याओं का अंबार लग रहा है।

आजकल तो राजनैतिक पकड़ या साख की विशेषता भी ढूँढ़ी जा रही है, यद्यपि इसका प्रचार-प्रसार अभी अधिक नहीं हुआ है। इस प्रकार के वैवाहिक संबंधों में समाज को खुद नहीं पता कि नारी का वास्तविक स्थान कहाँ है। आज नारी मल्टीपरपज यूज की सबसे सस्ती वस्तु बन गई है। बाजार और विज्ञापनों ने उसके सम्मान को आर्थिक हथकंडों से कुचला है।

आज महत्त्व की बात और विमर्श का विषय यह है कि हम अपनी कलम का उपयोग अब महिला के पक्ष में करें। उसे सामाजिक अपमान से निजात दिलाने की हर संभव कोशिश करें और अंधविश्वासपूर्ण व्यवहारों का बहिष्कार तो होना ही चाहिए। सड़े-गले पुराने रूग्ण विचारों व परंपराओं से भी नारी को मुक्त कराना चाहिए। वह ससम्मान पुरुष के समतुल्य या उससे अधिक सम्मान व हक की अधिकारिणी है।

प्राचीन काल से अब तक बेटी की हत्या और बेटी की माँ का परित्याग व हत्या जारी ही है। दहेज प्रथा भी पूर्णतः बहिष्कृत नहीं हुई है। आधुनिक युग में पुरुष को भी अधिक समझदार व जिम्मेदार होना चाहिए, परंतु इसके विपरीत वह अधिक अमानुषिक और अश्लील हो रहा है। मोबाईल और इंटरनेट का दुरुपयोग कर आज नारी के जीवन से विश्वास और शांति किस तरह तिरोहित हो रहे हैं यह एक औरत ही जानती है। इस वासना लोलुप समाज ने नवजात या बच्चियों तक को नहीं छोड़ा। कई बार तो सद्य-प्रसूता महिला की निश्चेतना अवस्था में नवजात अबोध बालक बदल दिए

दूसरी और सामाजिक दृष्टि से देखें तो बाल विवाह और बाल वैधव्य की पीड़ा भी औरतें ही झेलती आई हैं। बच्चा न होने पर सौतन की सजा और दर्द भी औरत ही झेलती है। 'बाँझ' की गाली भी औरत को ही दी जाती है। वह आदिकाल से बेची, खरीदी और निर्वासित भी की जाती रही है।

या बेच भी दिए जाते हैं। माँ अपनी बच्ची को किसी के भरोसे नहीं छोड़ पाती। स्कूल और कार्यालय की पवित्रता पर, पड़ोसी पर और रिश्तेदारों पर भी विश्वास डगमगा गया है। स्त्री अपने ही घर में भी आतंक-मुक्त नहीं रह गई है।

अब तो ऐसा लगता है कि नारी जाति के लिए शायद इससे अधिक खतरनाक समय किसी युग में, कभी भी नहीं हुआ होगा। यहाँ नवजात बालिका से लेकर वयोवृद्ध माँ भी भयभीत है, असुरक्षित है। समाज या कानून कोई भी उसकी सुरक्षा के लिए बुलंदी के साथ तत्काल खड़ा नहीं होता। अपराधी बच जाते हैं, निर्दोष महिला यंत्रणा झेलती रहती हैं। पहले पति नाराज होता था तो पत्नी को मायके में छोड़ देता था। बाद में द्विपत्नी की धमकी व तलाक की सजा भी मिलने लगी, परंतु अब तो स्थिति बहुत ही नृशंस और भयावह होती जा रही है। पति अपनी पत्नी का अश्लील वीडियो बनाकर उसे बाजार में खड़ा कर देता है और ब्लेकमैल भी करता है। कवि उदय प्रकाश जी की दो पंक्तियां याद आती है :

'स्त्री नहाने से डर रही थी,
गुसलखाने में कैमरे लगे थे।'

फिर भी औरत की आत्मनिर्भरता और उसका शिक्षित होना आज की सबसे बड़ी उपलब्धि है।

बेहतर और आवश्यक युग-परिवर्तन के लिए हमें ही सबसे पहले संकल्पित होना होगा। हमें खुद को नारी की पहरेदार बनकर जीना होगा। हर नारी में सबसे पहले 'मनुष्य' को देखें बाद में रिश्तों को मढ़ें। हर नारी की सुरक्षा को ही अपना धर्म मानकर अपनाएँ। ये लड़ाई संगठित और बुलंद होकर महिलाओं को ही लड़नी होगी। हाशिए पर खड़ी नारी को भी मुख्य धारा में जोड़ना होगा। सावित्रीबाई फुले जो कि 'प्रथम महिला शिक्षिका' हुईं, जिसने उस कठिन युग में भी अछूतोद्धार की लड़ाई लड़ी, अवैध संतान को सामाजिक सम्मान दिलाने का बीड़ा उठाया, उनके आदर्शों को अपनाना चाहिए। समाज की धारणाओं को भी परिवर्तित करना होगा। आज सैकड़ों भारतीय नारियाँ विश्व पटल पर अपनी पहचान बना चुकी हैं। हमें हर लड़की में विशेषता देखनी होगी। मुझे विश्वास है कि एक दिन दुनिया में औरतें भयमुक्त होंगी, पुरुष हमारा साथ देंगे। भारतीय नारियाँ आकाश छूएगी। यह सब होगा ही। आइए, कृत संकल्प हों, सक्रिय हों और वो दिन दूर नहीं, क्योंकि हम सभी मानवता, शांति व सम्मान के पक्षधर हैं।

'आज नहीं तो कल जीतेंगे,
हम ही श्रद्धा और प्रीति गढ़ेंगे।'

और इसी विश्वास का यह प्रतिफल भी है कि पुरुष समाज का सहयोग और समर्थन स्त्रियों को प्राप्त हो रहा है और वह एक से एक उपलब्धियाँ प्राप्त कर रही हैं, इसलिए यह भी कहा जा सकता है कि स्त्री अब हाशिए पर नहीं, अपितु मुख्य धारा में शामिल है।

संपर्क : 7415027400

कविता | फणीश्वर नाथ रेणु

साजन! होली आई है!

साजन! होली आई है!
सुख से हँसना
जी भर गाना
मस्ती से मन को बहलाना
पर्व हो गया आज-
साजन! होली आई है!
हँसाने हमको आई है!

साजन! होली आई है!
इसी बहाने
क्षण भर गा लें
दुखमय जीवन को बहला लें
ले मस्ती की आग-
साजन! होली आई है!
जलाने जग को आई है!

साजन! होली आई है!
रंग उड़ाती
मधु बरसाती
कण-कण में यौवन बिखराती,
ऋतु वसंत का राज-
लेकर होली आई है!
जिलाने हमको आई है!

साजन! होली आई है!
खूनी और बर्बर
लड़कर-मरकर-
मधकर नर-शोणित का सागर
पा न सका है आज-
सुधा वह हमने पाई है!
साजन! होली आई है!

साजन! होली आई है!
यौवन की जय!
जीवन की लय!
गूँज रहा है मोहक मधुमय
उड़ते रंग-गुलाल
मस्ती जग में छाई है
साजन! होली आई है!

बढ़ रहा है भाषाओं के लुप्त होने का संकट

प्रमोद भार्गव
वरिष्ठ लेखक

कोई भी भाषा जब मातृभाषा नहीं रह जाती है, तो उसके प्रयोग की अनिवार्यता और उससे मिलने वाले रोजगार मूलक कार्यों में कमी आने लगती है।

भारत की पाँच सौ भाषाओं के अस्तित्व पर लुप्त होने का खतरा मँडरा रहा है। इनमें से छत्तीसगढ़ की पाँच भाषाओं समेत देश की 117 भाषाएँ लुप्त होने के कगार पर पहुँच गई हैं। भारत सरकार इन भाषाओं को बचाने की दिशा में प्रयासरत तो है, परंतु उसके प्रयास अंग्रेजी की एक वेबसाइट तक ही सिमटे दिखाई दे रहे हैं। कुछ समितियाँ भी बनाई गई हैं और विशेषज्ञ भी नियुक्त किए हैं। अनेक केंद्रीय विश्वविद्यालयों में भाषाई शोध केंद्र भी स्थापित किए है। इनमें शब्दकोश, दृश्य व श्रव्य ऑडियो-वीडियो और कुछ लेखाचित्र बनाए गए है। लेकिन अंग्रेजी के बढ़ते वर्चस्व के चलते ये भाषाएँ बच पाएँगी, कहना मुश्किल है। 1961 की जनगणना में देश में कुल 1652 भाषाएँ थीं, पीपुल्स लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया ने 2010 में 1365 भारतीय भाषाओं की गिनती की थी। जबकि संविधान की आठवीं अनुसूची में 22 भाषाएँ शामिल हैं। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) ने 9 विश्वविद्यालयों का चयन 2014 में लुप्तप्राय भाषाओं को बचाने के लिए किया था। परंतु एक-एक कर 7 केंद्र बंद हो गए हैं।

मातृभाषाओं के परिप्रेक्ष्य में भारत की स्थिति अत्यंत चिंताजनक है। यहाँ की कुल 1365 मातृभाषाओं में से 117 भाषाएँ विलुप्त के कगार पर हैं और 500 भाषाओं पर विलुप्ति का खतरा मँडरा रहा है।

कोई भी भाषा जब मातृभाषा नहीं रह जाती है, तो उसके प्रयोग की अनिवार्यता और उससे मिलने वाले रोजगार मूलक कार्यों में कमी आने लगती है। जिस अत्याधुनिक पाश्चात्य सभ्यता पर गौरवान्वित होते हुए हम व्यावसायिक शिक्षा और प्रौद्योगिक विकास के बहाने अंग्रेजी का प्रभाव बढ़ाते जा रहे हैं, दरअसल यह छद्म भाषाई अहंकार है। क्षेत्रीय भाषाएँ और बोलियाँ हमारी ऐतिहासिक सांस्कृतिक धरोहरें हैं। इन्हें मुख्यधारा में लाने के बहाने, हम तिल-तिल मारने का काम कर रहे हैं। कोई भी भाषा कितने ही छोटे क्षेत्र में, भले कम से कम लोगों द्वारा बोली जाने के बावजूद उसमें पारंपरिक ज्ञान का असीम भंडार होता है। ऐसी भाषाओं का उपयोग जब मातृभाषा के रूप में नहीं रह जाता है, तो वे विलुप्त होने लगती हैं।

जर्मन विद्वान मैक्समूलर ने अपने शोध से भारत के भाषा और संस्कृति संबंधी तथ्यों से जिस तरह समाज को परिचित कराया था, उसी तर्ज पर अब नए सिरे से गंभीर प्रयास किए जाने की जरूरत है, क्योंकि हर पखवाड़े भारत समेत दुनिया में एक भाषा मर रही है। इस दायरे में आने वाली खासतौर से आदिवासी व अन्य जनजातीय भाषाएँ हैं, जो लगातार उपेक्षा का शिकार होने के कारण विलुप्त हो रही हैं। ये भाषाएँ बहुत उन्नत हैं और ये पारंपरिक ज्ञान की कोष हैं। भारत में ऐसे हालात सामने भी आने लगे हैं कि किसी एक इंसान की मौत के साथ उसकी भाषा का भी अंतिम संस्कार हो गया है। स्वाधीनता दिवस 26 जनवरी, 2010 के दिन अंडमान द्वीप समूह की 85 वर्षीय बोआ के निधन के साथ एक ग्रेट अंडमानी भाषा 'बो' भी हमेशा के लिए विलुप्त हो गई। इस भाषा को जानने, बोलने और लिखने वाली वे अंतिम इंसान थीं। इसके पूर्व नवंबर 2009 में एक और महिला बोरो की मौत के साथ 'खोरा' भाषा का अस्तित्व समाप्त हो गया था। किसी भी भाषा की मौत सिर्फ एक भाषा की ही मौत नहीं होती, बल्कि उसके साथ ही उस भाषा का ज्ञान भण्डार, इतिहास, संस्कृति, लोकगीत, लोककथाएँ और उस क्षेत्र का भूगोल एवं उससे जुड़े तमाम तथ्य और मनुष्य भी इतिहास का हिस्सा बन जाते हैं। इन भाषाओं और इन लोगों का अस्तित्व खत्म होने का प्रमुख कारण इन्हें जबरन मुख्यधारा से जोड़ने का छलावा है। इन स्थितियों के चलते अनेक आदिम भाषाएँ विलुप्ति के कगार पर हैं।

भारत सरकार ने उन भाषाओं के आँकड़ों का संग्रह किया है, जिन्हें 10 हजार से अधिक संख्या में

लोग बोलते हैं। 2001 की जनगणना के आँकड़ों के अनुसार ऐसी 122 भाषाएँ और 234 मातृभाषाएँ हैं। भाषा-गणना की ऐसी बाध्यकारी शर्त के चलते जिन भाषा व बोलियों को बोलने वाले लोगों की संख्या 10 हजार से कम है, उन्हें गिनती में शामिल ही नहीं किया गया। परंतु भाषाओं के लुप्त होने की चिंता के चलते 10,000 से कम लोगों द्वारा बोली जाने वाली 117 भाषाएँ चिह्नित की गई हैं। इन भाषाओं में प्रमुख रूप से ओडिशा की मंदा, परजी एवं पेंगो, कर्नाटक की कोरगा और कुरुबा, आंध्र प्रदेश की गदाबा तथा नाइको, तमिलनाडु की कीकोटा तथा टोडा, अरुणाचल की मरा एवंना, असम की ताईनोरा और ताईरोंग, उत्तराखंड की बंगानी, झारखंड की बिरहोर, महाराष्ट्र की निहाली, मेघालय की रूगा, बंगाल की टीटो और छत्तीसगढ़ की घासीदार केंद्रीय विश्वविद्यालय के अनुसार तुरी, कोरवा, विलोर, गोंडी और ध्रुवा संकट में हैं।

भारत सरकार ने उन भाषाओं के आँकड़ों का संग्रह किया है, जिन्हें 10 हजार से अधिक संख्या में लोग बोलते हैं। 2001 की जनगणना के आँकड़ों के अनुसार ऐसी 122 भाषाएँ और 234 मातृभाषाएँ हैं।

यहाँ चिंता का विषय यह भी है कि ऐसे क्या कारण और परिस्थितियाँ रहीं कि 'बो' और 'खोरा' भाषाओं की जानकार दो महिलाएँ ही बची रह पाईं। ये अपनी पीढ़ियों को उत्तराधिकार में अपनी मातृभाषाएँ क्यों नहीं दे पाईं। दरअसल इन प्रजातियों की यही दो महिलाएँ अंतिम वारिस थीं। अंग्रेजों ने जब भारत में फिरंगी हुकूमत कायम की तो उसका विस्तार अंडमान-निकोबार द्वीप समूहों तक भी किया। अंग्रेजों के हस्तक्षेप और आधुनिक विकास की अवधारणा के चलते इन प्रजातियों को भी जबरन मुख्यधारा में लाए जाने के प्रयास का सिलसिला शुरू किया गया। इस समय तक इन समुद्री द्वीपों में करीब 10 जनजातियों के पाँच हजार से भी ज्यादा लोग प्रकृति की गोद में नैसर्गिक जीवन व्यतीत कर रहे थे। बाहरी लोगों का जब क्षेत्र में आने का सिलसिला निरंतर रहा तो ये आदिवासी विभिन्न जानलेवा बीमारियों की चपेट में आने लगे। नतीजतन गिनती के केवल 52 लोग जीवित बच पाए। ये लोग 'जेरु' तथा अन्य भाषाएँ बोलते थे। बोआ ऐसी स्त्री थी, जो अपनी मातृभाषा 'बो' के साथ मामूली अंडमानी हिन्दी भी बोल लेती थी। लेकिन अपनी भाषा बोल लेने वाला कोई संगी-साथी न होने के कारण तजिंदगी उसने 'गूँगी' बने रहने का अभिशाप झेला। भाषा व मानव विज्ञानी ऐसा मानते हैं कि ये लोग 65 हजार साल पहले सुदूर अफ्रीका से चलकर अंडमान में बसे थे। ईसाई मिशनरियों द्वारा इन्हें जबरन ईसाई बनाए जाने की कोशिशों और अंग्रेजी सीख लेने के दबाव भी इनकी घटती आबादी के कारण बने।

'नेशनल ज्योग्राफिक सोसायटी एंड लिविंग टंग्स इंस्टीट्यूट फॉर एंडेंजर्ड लैंग्वेजेज' के अनुसार हरेक पखवाड़े एक भाषा की मौत हो रही है। सन् 2100 तक भू-मण्डल में बोली जाने वाली सात हजार से भी अधिक भाषा और बोलियों का लोप हो सकता है। इनमें से पूरी दुनिया में 2700 भाषाएँ संकटग्रस्त हैं। इन भाषाओं में असम की 17 भाषाएँ शामिल हैं। यूनेस्को द्वारा जारी एक जानकारी के मुताबिक असम की देवरी, मिसिंग, कछारी, बेइटे, तिवा और कोच राजवंशी सबसे संकटग्रस्त भाषाएँ हैं। इन भाषा-बोलियों का प्रचलन लगातार कम हो रहा है। नई पीढ़ी के सरोकार असमिया, हिन्दी और अंग्रेजी तक सिमट गए हैं। इसके बावजूद 28 हजार लोग देवरी भाषी, मिसिंग भाषी साढ़े पाँच लाख और बेइटे भाषी करीब 19 हजार अभी भी हैं। इनके अलावा असम की बोडो, कार्बो, डिमासा, विष्णुप्रिया, मणिपुरी और काकबरक भाषाओं के जानकार भी लगातार सिमटते जा रहे हैं। घरों में, बाजार व रोजगार में इन भाषाओं का प्रचलन कम होते जाने के कारण नई पीढ़ी इन भाषाओं को सीख-पढ़ नहीं रही है।

वे ही भाषाएँ बोलियों और लिपियों के रूप में जीवित रह सकती हैं, जो उपयोग में बनी रहें। पूरी दुनिया में 15 हजार से अधिक भाषाएँ दर्ज हैं, लेकिन आज उनमें से आधी से ज्यादा मर गईं हैं। इसका कारण इन्हें उपयोग से वंचित कर देना है। कई लोग भाषाओं की विलुप्ति का कारण आक्रांताओं के हमलों को मानते हैं। भारत में भी इस स्थिति को भाषाओं की विलुप्ति का कारण माना गया। लेकिन यह तथ्य थोथा है। फ्रांस में भी यह भ्रम फैला हुआ है। फ्रेंच भाषियों को यह आशंका सता रही है कि वहाँ कि युवा पीढ़ी अंग्रेजी के प्रति आकर्षित है। इसलिए वहाँ अंग्रेजी से मुक्ति के उपाय सुझाए जा रहे हैं। जरूरत भाषा को उपयोगी बनाए रखने की है। यदि भाषाएँ बोल-चाल के साथ रोजगार और तकनीक की भाषा बनी रहती हैं, तो जीवित बनी रहेंगी। नाइजीरिया और कैमरून की 'बिक्या' भाषा इसी तरह लुप्त हुई। इस भाषा को प्रचलन में बनाए रखने वाले एक-एक कर जब मरते चले गए तो उनके साथ भाषा भी मरती चली गई। वर्तमान में विश्व की 90 प्रतिशत भाषाओं और बोलियों पर विलुप्त हो जाने का खतरा मँडरा रहा है। वैसे भाषाओं का मरना हर युग और हर देश में एक सिलसिला बना रहा है। भारत की सबसे प्राचीन ब्राह्मी लिपि को आज बाँचने वाला कोई नहीं है। इसी तरह एशिया, अफ्रीका और ऑस्ट्रेलिया क्षेत्रों की अनेक भाषा और बोलियाँ तिल-तिल मरती जा रही हैं।

प्रकृति की विलक्षणता और सामाजिक विविधता की युगों से चली आ रही पहचानों को हम भाषाओं के माध्यम से ही पृथक्-पृथक् रूपों में चिह्नित कर पाते हैं। भाषा से ही हम विकास का ढाँचा खड़ा कर पाते हैं। इस विकास के साथ जो भाषा जुड़ी होती है, उसकी जीवंतता बनी रहती है। आज अंग्रेजी जहाँ भाषाओं की विलुप्तता से जहाँ खलनायिका साबित हो रही है, वहीं इसके महत्त्व को एकाएक इसलिए नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है? क्योंकि यह आधुनिक तकनीक के व्यावहारिक और व्यावसायिक उपयोग का विश्वव्यापी आधार बन गई है। दुनिया की युवा पीढ़ी विश्व समाज से जुड़ने के लिए अंग्रेजी की ओर आकर्षित है। लेकिन यदि अंग्रेजी इसी तरह पैर पसारती रही तो दुनिया में भाषायी एकरूपता छा जाएगी, जिसकी

वटवृक्षी छाया में अनेक भाषाएँ मर जाएँगी।

भारत की तमाम स्थानीय भाषाएँ व बोलियाँ अंग्रेजी के बढ़ते प्रभाव के कारण संकटग्रस्त हैं। व्यावसायिक, प्रशासनिक, चिकित्सा, अभियांत्रिकी व प्रौद्योगिकी की आधिकारिक भाषा बन जाने के कारण अंग्रेजी रोजगारमूलक शिक्षा का प्रमुख आधार बना दी गई है। इन कारणों से उत्तरोत्तर नई पीढ़ी मातृभाषा के मोह से मुक्त होकर अंग्रेजी अपनाने को विवश है। प्रतिस्पर्धा के दौर में मातृभाषा को लेकर युवाओं में हीनभावना भी पनप रही है। इसलिए जब तक भाषा संबंधी नीतियों में आमूलचूल परिवर्तन नहीं होता तब तक भाषाओं की विलुप्ति पर अंकुश लगाना मुश्किल है। भाषाओं को बचाने के लिए समय की माँग है कि क्षेत्र विशेषों में स्थानीय भाषा के जानकारों को ही निगमों, निकायों, पंचायतों, बैंकों और अन्य सरकारी दफ्तरों में रोजगार दिए जाएँ। इससे अंग्रेजी के फैलते वर्चस्व को चुनौती मिलेगी और ये लोग अपनी भाषाओं व बोलियों का संरक्षण तो करेंगे ही उन्हें रोजगार का आधार बनाकर गरिमा भी प्रदान करेंगे। ऐसी सकारात्मक नीतियों से ही युवा पीढ़ी मातृभाषा के प्रति अनायास पनपने वाली हीनभावना से भी मुक्त होगी। गोया, जरूरी है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति में मातृभाषा और आठवीं अनुसूची में शामिल भाषाओं को नए सिरे से अहमियत दी जाए।

आंचलिक भाषाओं को बचाने की ठोस पहल

कोई भी भाषा जब मातृभाषा नहीं रह जाती है, तो उसके प्रयोग की अनिवार्यता में कमी और उससे मिलने वाले रोजगार मूलक कार्यों में भी कमी आने लगती है। पिछले 75 सालों में हमारी भाषा और बोलियों के साथ यही होता रहा है। परंतु अब नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (एनईपी) को लागू करने की दिशा में उल्लेखनीय पहल करते हुए केंद्र सरकार नए सत्र से पाँच नए उपाय करने जा रही है। इनमें बच्चों को मातृ, घरेलू और क्षेत्रीय भाषा में पाठ्य पुस्तकें पढ़ाने पर जोर दिया जाएगा। इस लक्ष्यपूर्ति के लिए 52 प्रवेशिकाएँ, अर्थात् पाठ्य पुस्तकें तैयार की गई हैं। इनसे छात्र-छात्राओं से लेकर वयस्क तक इन्हीं भाषाओं में वर्णमाला और दो अंकों तक गणित सीख सकेंगे। पहले चरण में 17 राज्यों की राजभाषा व स्थानीय भाषा में 52 पुस्तकें मैसूर के भारतीय भाषा संस्थान और राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (एनसीईआरटी) ने तैयार की हैं। देश में ऐसी 121 भाषाएँ हैं, जिन्हें क्षेत्रीय लोग स्थानीय स्तर पर लिखने व बोलने में प्रयोग करते हैं। जल्दी ही देश के बाकी राज्यों की आंचलिक भाषाओं में प्रवेशिका उपलब्ध करा दी जाएँगी। इन पाठ्य-पुस्तकों का उपलब्ध होना न केवल विद्यार्थियों के लिए बल्कि विलोपित हो रही मातृभाषाओं का अस्तित्व बचाने की परिवर्तनकारी पहल है।

'जनजातीय भाषाओं सहित गैर-अनुसूचित भाषाओं में ज्ञानार्जन करने वाले बच्चों के लिए यह पहल एक प्रेरणादायी यात्रा साबित होगी। यह गहरी समझ, निरंतर सीखने और स्वदेशी संस्कृति से जुड़ाव के साथ शिक्षा के अन्य क्षेत्रों में बड़ी सफलता का मार्ग प्रशस्त करेगी। इससे विभिन्न भारतीय भाषाओं में प्रारंभिक पाठ्यपुस्तकों को जारी करके एक नई सभ्यता के पुनर्जागरण की शुरुआत होगी। यह पहल निर्बाध और भविष्यवादी शिक्षण परिदृश्य तैयार कर भारतीय भाषाओं में सीखने की प्रवृत्ति को बढ़ावा देगी। इससे नई शिक्षा नीति का दृष्टिकोण साकार होगा और शालेय शिक्षा में महत्त्वपूर्ण बदलाव आएँगे। साथ ही सरकार ने राष्ट्रीय विद्या समीक्षा केंद्र का राज्य इकाइयों व 200 टीवी डीटीएच चैनलों के साथ एकीकरण का निर्णय भी लिया है।' इस हेतु सरकार ने 12वीं कक्षा तक के विद्यार्थियों के लिए 22 क्षेत्रीय व प्रादेशिक भाषाओं में चैनल तैयार कर लिए हैं। ये बिना इंटरनेट चलेंगे। भविष्य में ये चैनल ओटीटी और यूट्यूब पर भी उपलब्ध होंगे। शिक्षकों की गुणवत्ता एक जैसी हो, इसके लिए व्यावसायिक मानक तैयार किए हैं। इसमें शिक्षकों के स्तर व क्षमताओं को परिभाषित किया गया है। इनका मूल्यांकन भी होता रहेगा। साफ है, शिक्षकों व विद्यार्थियों के सशक्तिकरण व गुणवत्तापूर्ण शिक्षा को अधिक समावेशी बनाने की दृष्टि से यह पहल महत्त्वपूर्ण कही जा सकती है। लेकिन हमारे देश में ज्यादातर नवाचार क्रियान्वयन के स्तर पर पहुँचकर दम तोड़ देते हैं।

दुनिया में लुप्त होती भाषाएँ

यह एक दुःखद समाचार है कि अंग्रेजी वर्चस्व के चलते भारत समेत दुनिया की अनेक मातृभाषाएँ अस्तित्व के संकट से जूझ रही हैं। जबकि राष्ट्र संघ द्वारा अंतरराष्ट्रीय मातृभाषा दिवस की घोषणा का प्रमुख उद्देश्य था कि विश्व में लुप्त हो रही भाषाएँ संरक्षित हों, विश्व में भाषाई एवं सांस्कृतिक विविधता और बहुभाषिता को बढ़ावा मिले। किंतु ऐसा होने के बजाय, दुनिया में 2500 भाषाएँ इस बदहाल स्थिति में पहुँच गई हैं कि वे विलुप्ति के कगार पर हैं। दुनिया की 25 प्रतिशत ऐसी भाषाएँ हैं, जिनके बोलने वाले एक हजार से भी कम लोग रह गए हैं। हालाँकि मातृभाषाओं की व्यावसायिक उपयोगिता का ख्याल रखते हुए 17 नवंबर, 1999 को संयुक्त राष्ट्र संघ ने इस दिन को प्रतिवर्ष 21 फरवरी को मनाए जाने की स्वीकृति दी। लेकिन अंग्रेजी वर्चस्व की एकरूपता में बहुभाषी शिक्षा कितनी सेंध लगा पाती है, यह कहना मुश्किल है? हालाँकि अंतरराष्ट्रीय मातृभाषा दिवस हमारे पड़ोसी बांग्लादेश के भाषाई आंदोलन से प्रभावित होकर शुरू हुआ था। बांग्लादेश में 'भाषा आंदोलान दिवस' 1952 से मनाया जाता रहा है। यहाँ इस दिन राष्ट्रीय अवकाश भी होता है। सन् 2100 तक धरती पर बोली जाने वाली ऐसी पाँच हजार से भी ज्यादा भाषाएँ हैं, जो विलुप्त हो सकती हैं।

भारत के बाद अमेरिका की स्थिति चिंताजनक है, जहाँ की 192 भाषाएँ दम तोड़ रही हैं। अंतरराष्ट्रीय मातृभाषा दिवस के अवसर पर भाषाओं की विश्व इकाई द्वारा दी गई जानकारी में बताया है कि बेलगाम अंग्रेजी इसी तरह से पैर पसारती रही तो एक दशक के भीतर करीब ढाई हजार भाषाएँ पूरी तरह समाप्त हो जाएँगी। भारत और अमेरिका के बाद इंडोनेशिया की 147 भाषाओं को जानने वाले खत्म हो जाएँगे। दुनिया भर में 199 भाषाएँ ऐसी हैं, जिनके बोलने वालों की संख्या एक दर्जन लोगों से भी कम है। इनमें 'कैरेम' भी एक ऐसी भाषा है, जिसे यूक्रेन में मात्र छह लोग बोलते हैं। इसी तरह ओकलाहामा में 'विचिता' भी एक ऐसी भाषा है, जिसे देश में मात्र दस लोग बोल पाते हैं। इंडोनेशिया की 'लेंगिलू' बोलने वाले केवल चार लोग बचे हैं। 178 भाषाएँ ऐसी हैं, जिन्हें बोलने वाले लोगों की संख्या 150 से भी कम है।

संपर्क: 9425488224

सरोकार

छपी हुई किताबों से युवा पीढ़ी की लगातार बढ़ती दूरी चिंताजनक

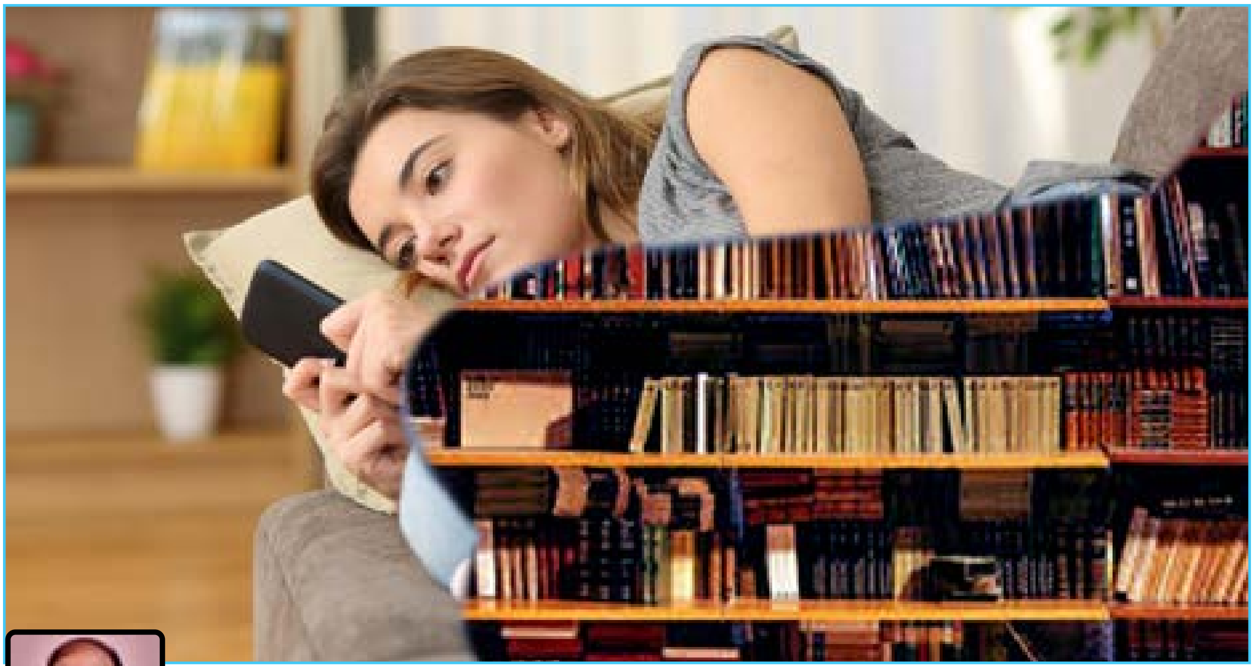

शैलेन्द्र चौहान

गोरखपुर के गीता प्रेस से छपने वाली 'रामचरित मानस' लंबे समय से इस मामले में निर्विवाद रूप से पहले नंबर पर रही है।

भारत में खासकर कोरोना के समय से ऑनलाइन पढ़ने-पढ़ाने और डिजिटल बुक्स का चलन लगातार बढ़ रहा है। देश में लगभग हर जगह इंटरनेट की सुलभता की वजह से लोगों की डिजिटल किताबों तक पहुँच बढ़ी है। छपी हुई किताबों के मुकाबले इनकी कीमत भी अकसर कम होती है। साहित्यकारों और शिक्षाविदों की मानें तो इसके बावजूद कई चीजें ऐसी हैं, जो छपी किताबों को डिजिटल के मुकाबले बेहतर साबित करती हैं।

एक तथ्य यह है कि स्वस्थ दिमाग के लिए किताब पढ़ना बहुत जरूरी है। रचनात्मकता और एकाग्रता जैसे गुणों को विकसित करने में किताबों से बेहतर कुछ और नहीं हो सकता। इ-बुक का प्रचलन होने के बावजूद क्या उससे वह अनुभूति हो सकती है जो हाथ में किताब लेकर पढ़ने पर मिलती है? बचपन में मोहल्ले में बने क्लबों में एक कोना लाइब्रेरी का होता था। हम वहाँ से नियमित रूप से किताबें घर ले जाकर पढ़ते थे, लेकिन इंटरनेट की बढ़ती खुमारी के कारण अब ऐसी लाइब्रेरी विलुप्त होने की कगार पर हैं। असल में तेजी से बदलती शिक्षा व्यवस्था और बस्तों के बढ़ते बोझ, ट्यूशन व कोचिंग के कारण छात्रों के पास पाठ्यक्रम से अलग कुछ पढ़ने के लिए समय ही नहीं बचा है। पढ़ाई में बढ़ती प्रतिद्वंद्विता और माता-पिता की इच्छाओं के बोझ ने बच्चों को पहले से कई गुना ज्यादा व्यस्त कर दिया है। रही-सही कसर स्मार्टफोन और इंटरनेट ने पूरी कर दी है, जिससे छात्रों में वैसी एकाग्रता नहीं पनपती, जो किताबें पढ़ने से पनपती है।

वर्ष 2024 के दौरान हिंदी की कौन-सी किताब सबसे ज्यादा बिकी, इसके आँकड़े भ्रामक हैं, लेकिन गोरखपुर के गीता प्रेस से छपने वाली 'रामचरित मानस' लंबे समय से इस मामले में निर्विवाद रूप से पहले नंबर पर रही है। उसके अलावा राजकमल प्रकाशन, प्रभात प्रकाशन, हिंदू युग्म, पेंगुइन और रैंडम हाउस से छपी कई किताबें भी चर्चा और बिक्री के मामले में शीर्ष पर रही हैं।

इनके पास मार्केटिंग नेटवर्क है। दिल्ली के ज्यादातर हिंदी लेखक इनके प्रभाव में रहते हैं बल्कि लोग इन्हें प्रकाशकों का एजेंट मानते हैं। गत वर्ष कथेतर विधा की किताबें सबसे ज्यादा बिकी हैं।

छपी हुई किताबों से युवा पीढ़ी की लगातार बढ़ती दूरी एक गंभीर सामाजिक समस्या बनती जा रही है। आज के युवा पढ़ने की बजाय रील्स और दूसरे वीडियो देखने को ज्यादा तरजीह दे रहे हैं। पहले अभिभावक अपने बच्चों को जन्मदिन और दूसरे मौकों पर जहाँ उपहार के तौर पर किताबें भेंट देते थे, वहीं अब इसकी जगह स्मार्टफोन और स्मार्ट वॉच जैसी चीजों ने ले ली है। दो-तीन दशक पहले तक स्कूलों और कॉलेज परिसरों में खाली समय में पुस्तकों पर बहस होती थी, लेकिन अब उसकी जगह इंटरनेट पर आने वाले वीडियो और ओटीटी सीरीज बहस का मुद्दा बन गए हैं। देश के विभिन्न हिस्सों में अब भी भारी तादाद में लाइब्रेरी हैं और वहाँ किताबें भी भरी पड़ी हैं, लेकिन अब वहाँ पाठकों का भारी टोटा है। वहाँ सूनापन है।

पढ़ने की तकनीक के रूप में पुस्तक की वास्तविक स्थिति पर यहाँ ध्यान केंद्रित नहीं है, बल्कि पुस्तक-केंद्रित समाज से दूर सांस्कृतिक और तकनीकी बदलाव साहित्य को कैसे प्रभावित करता है और जरूरी नहीं कि साहित्य का अध्ययन या परिभाषा यानी, पुस्तक की बदलती भूमिका साहित्यिक और वास्तव में, एक सौंदर्य प्रतिक्रिया को कैसे प्रेरित करती है। यह बात इस समझ पर आधारित है कि पढ़ने की तकनीक के रूप में पुस्तक की स्थिति ज्ञान तक पहुँचने के लिए केंद्रीय प्रारूप से कई माध्यमों में से एक होने की ओर बढ़ रही है। पुस्तक नए पढ़ने के प्लेटफॉर्म के साथ अप्रचलित नहीं होगी, बल्कि नए अवतार और पाठक बदलेगी और विकसित होगी; यह कुछ प्रकार की साक्षरता आवश्यकताओं और साहित्यिक इच्छाओं को पूरा करना जारी रखेगी, विशेष रूप से, जो इसकी पुस्तकबद्ध भौतिकता और क्षमता से संबंधित हैं। पढ़ने की वस्तु के रूप में कोडेक्स की पुस्तक-बद्ध प्रकृति पर यह ध्यान और आकर्षण, कुछ मामलों में, साहित्य के कुछ प्रकारों, विशेष रूप से प्रयोगात्मक लेखन के लिए हमेशा से रहा है। साहित्य कभी भी केवल सूचना प्रदान करने के बारे में नहीं रहा है, शायद अनुभव और ज्ञान के रूप में सूचना के बारे में, लेकिन ऐसी सामग्री, जो इसकी औपचारिक प्रस्तुति से अविभाज्य है। इस प्रकार, पुस्तकों की स्थिति में पुस्तक-बद्ध सौंदर्यशास्त्र या पुस्तकीयता के सौंदर्यशास्त्र की ओर सामान्य बदलाव वास्तव में साहित्य की पहले से मौजूद स्थिति की पुष्टि करता है। दूसरे शब्दों में, जैसे-जैसे कोडेक्स अन्य मीडिया प्रारूपों में सूचना पहुँच के रूप में अपना प्रभुत्व खोता है, पुस्तक-बद्ध सामग्री साहित्यिकता से अधिक जुड़ी होती जाती है। इस प्रकार, पुस्तक की अनुमानित और बहुत-पूर्वानुमानित मृत्यु साहित्य के लिए और, विशेष रूप से प्रयोगात्मक साहित्य के लिए फायदेमंद साबित हो सकती है। ऐसी कृतियाँ, जो किताबीपन के सौंदर्यशास्त्र को अपनाती हैं, अपने समकालीन, डिजिटल क्षण का जवाब यह दिखाकर देती हैं कि कैसे साहित्य हमारी उभरती हुई तकनीकी संस्कृति में सौंदर्य अभिव्यक्ति और सांस्कृतिक आलोचना के लिए एक स्थान के रूप में एक केंद्रीय भूमिका बनाए रखता है। वे प्रिंट और कागज़ पर नए मीडिया की शक्ति और क्षमता, साथ ही साथ भय और कुंठाओं का उपयोग करते हैं। जिस तरह से वे ऐसा करते हैं, उसकी जाँच करने से विश्लेषण की एक क्रॉसकरंट को बढ़ावा मिलता है, जो माँग करता है कि हम उन शब्दों और साधनों पर फिर से विचार करें, जिनके माध्यम से हम पढ़ने, साक्षरता और निश्चित रूप से साहित्य के भविष्य के बारे में अपनी चिंताओं को व्यक्त करते हैं।

छपी हुई किताबों से युवा पीढ़ी की लगातार बढ़ती दूरी एक गंभीर सामाजिक समस्या बनती जा रही है। आज के युवा पढ़ने की बजाय रील्स और दूसरे वीडियो देखने को ज्यादा तरजीह दे रहे हैं। पहले अभिभावक अपने बच्चों को जन्मदिन और दूसरे मौकों पर जहाँ उपहार के तौर पर किताबें भेंट देते थे, वहीं अब इसकी जगह स्मार्टफोन और स्मार्ट वॉच जैसी चीजों ने ले ली है।

इक्कीसवीं सदी के आरंभ में न्यूयॉर्क टाइम्स ने 'द फ्यूचर ऑफ रीडिंग' नामक एक शृंखला चलाई, जबकि ऑब्जर्वर, फाइनेंशियल टाइम्स और कई वेबसाइटों (जनवरी मैगज़ीन सहित) ने 'द डेथ ऑफ द बुक अगेन' शीर्षक से लेख प्रस्तुत किए। साल 2008 में जेफ गोमेज़ ने 'प्रिंट इज़ डेड : बुक्स इन अवर डिजिटल एज' नामक किताब के साथ इस बयानबाजी को भुनाया और प्रिंट में इस विषय पर लगातार अधिक टिप्पणियाँ आती रहीं। यह कोलाहल अनिवार्य रूप से एक प्रश्न की ओर ले जाता है। पुस्तक की आसन्न मृत्यु के साथ, आज के समय में अपने आप में व्यस्तता का, साहित्य पर क्या प्रभाव पड़ता है? संक्षेप में एक उत्तर है, 'किताबीपन का सौंदर्यशास्त्र', जो 2000 के बाद प्रकाशित उपन्यासों में एक प्रवृत्ति है। यह अमेरिकी या यहाँ तक कि एंग्लोफोन उपन्यासों तक सीमित नहीं है, यह सिर्फ़ एक संयोग से कहीं अधिक है, यह पश्चिम में एक उभरती हुई साहित्यिक रणनीति रही, जो तत्कालीन सांस्कृतिक क्षण को बयाँ करती है। ये उपन्यास प्रिंट पेज की शक्ति का इस तरह से दोहन करते हैं कि किताब को मल्टीमीडिया प्रारूप की

तरफ ध्यान आकर्षित किया जाता है, जो डिजिटल तकनीकों से जुड़ी हुई है। यहाँ किताब को एक सौंदर्यशास्त्र के रूप में परिभाषित किया जाता है, जिसकी शक्ति का उपयोग साहित्य द्वारा सदियों से सोद्देश्यपूर्ण ढंग से किया जाता रहा है और डिजिटल युग में भी इसका उपयोग जारी रहेगा। यहाँ किताबों की मौत और पढ़ने के अंत का डर कोई नई बात नहीं है; इस तरह की बयानबाजी स्वयं किताब के आने से बहुत पहले ही नई पढ़ने और लिखने की तकनीकों के आने के साथ-साथ हुई थी, प्लेटो के डर के बारे में सोचें कि लिखने से अनाथ भाषा पैदा होगी और याद रखने की सांस्कृतिक क्षमता नष्ट हो जाएगी। न ही किताबीपन का सौंदर्यशास्त्र। पाठ्य सामग्री और किताब से जुड़ी पढ़ने की वस्तु पर ध्यान केंद्रित करना, कोई नई बात है : ट्रिस्ट्राम शैंडी के बारे में सोचें। वास्तव में, यह तर्क दिया जा सकता है कि किताबीपन का सौंदर्यशास्त्र पुस्तक के रूप जितना ही पुराना है और पुस्तक की मृत्यु के बारे में बयानबाजी उतनी ही पुरानी है।

छपी हुई किताबें मौजूदा दौर में भी प्रासंगिक हैं, लेकिन युवा पीढ़ी में शुरू से ही पढ़ने की आदत डालना जरूरी है। इसकी शुरुआत घर से हो सकती है। उसके बाद स्कूलों में भी इसके लिए एक अतिरिक्त पीरियड रखा जा सकता है। किताबों से युवा पीढ़ी की यह बढ़ती दूरी भविष्य के लिए अच्छा संकेत नहीं है। स्थिति को सुधारने के लिए समाज के सभी तबकों को आगे आना होगा।

छपी हुई किताबें नियमित रूप से पढ़ने की वजह से याददाश्त तो बढ़ती ही है, एकाग्रता भी मजबूत होती है। कोलकाता और दिल्ली जैसे पुस्तक मेले में अब भी साहित्य, उपन्यास और कथा-कहानी की किताबें भारी तादाद में बिकती हैं, लेकिन सबसे बड़ा सवाल यह है कि उनको खरीदने के बाद पढ़ते कितने लोग हैं। ज्यादातर लोगों के लिए मशहूर लेखकों की किताबें खरीदकर अपने ड्राइंगरूम में सजाकर रखना एक स्टेटस सिंबल बन गया है।

किताबों के इंसान के सबसे बढ़िया दोस्त होने की कहावत अब भी अप्रासंगिक नहीं हुई है। जरूरत है, बच्चों को शुरू से ही किताबें पढ़ने के लिए प्रेरित करने की। इसके लिए घर और स्कूलों में जागरूकता अभियान चलाना जरूरी है। अगर शुरू में ही छपी हुई किताबों से बच्चे का मोहभंग हो गया तो वह आगे कभी इनको हाथ नहीं लगाएगा। इंटरनेट पर देखी या पढ़ी हुई चीज लोग जल्दी ही भूल जाते हैं, लेकिन छपी हुई किताबों में पढ़ी चीजें लंबे समय तक जेहन में रहती हैं। कैसे स्कूल में इतिहास और भूगोल के लंबे-लंबे अध्याय याद कर लेते थे। इनमें से खासकर मुगल साम्राज्य के पतन की वजह से संबंधित सवाल का जवाब ही कई पन्नों में लिखना होता था। किताबें छात्रों को आलोचनात्मक और विश्लेषणात्मक रूप से सोचने की क्षमता विकसित करने के साथ ही स्थापित धारणाओं पर सवाल उठाने के लिए प्रोत्साहित तो करती ही हैं। किसी भी विषय पर गहरी समझ भी पैदा करती है। जॉर्ज ओरवेल लिखित '1984' आलोचनात्मक सोच की प्रेरणा देने वाली किताब का बेहतरीन नमूना है।

छपी हुई किताबें नियमित रूप से पढ़ने की वजह से याददाश्त तो बढ़ती ही है। एकाग्रता भी मजबूत होती है। कोलकाता और दिल्ली जैसे पुस्तक मेले में अब भी साहित्य, उपन्यास और कथा-कहानी की किताबें भारी तादाद में बिकती हैं, लेकिन सबसे बड़ा सवाल यह है कि उनको खरीदने के बाद पढ़ते कितने लोग हैं।

शिक्षाविदों का कहना है कि तनाव के भरे आधुनिक दौर में छपी हुई किताबें मानसिक तनाव दूर करने में काफी उपयोगी साबित हो सकती हैं। किताबें भावनात्मक बुद्धिमत्ता और सहानुभूति विकसित करने में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

किताब पढ़ने की आदत कल्पनाशक्ति और रचनात्मकता को भी बढ़ावा देती हैं। किताबें पढ़ने से रचनात्मकता जिस तरह बेहतर होती है, वैसा असर डिजिटल का नहीं हो सकता। किताब पढ़ते समय छात्र दुनिया के अलग-अलग हिस्सों और कालखंड की कल्पना करने लगते हैं। इसका जेके रोलिंग की हैरी पॉटर सीरीज का उदाहरण है। दुनिया भर में करोड़ों लोग इसके दीवाने हैं। पुस्तक के दिलचस्प पात्र और विस्तार से उनकी जादुई दुनिया के वर्णन से छात्रों की कल्पना भी उड़ान भरने लगती है। वो सपने देखते हुए खुद की काल्पनिक कहानियाँ की दिशा में प्रेरित होते हैं।

छपी हुई किताबें पढ़ने से शब्द-भंडार भी बढ़ता है। छात्र और युवा नए शब्द सीखते हैं, इससे उनका ज्ञान समृद्ध होता है। नए शब्द सीखने के लिए किताबें पढ़ने से बेहतर कोई और तरीका नहीं है।

मनोवैज्ञानिक भी यह स्वीकारते हैं कि रात को बिस्तर पर सोने से पहले किताबें पढ़ने से बेहतर कुछ नहीं हो सकता। इससे बेहद सुकून भरी नींद आती है। इसके उलट, देर रात तक मोबाइल चलाने वाले लोग रात को नींद में खलल की शिकायत करते पाए जाते हैं। किताबें पढ़ने की आदत लोगों को मानसिक अवसाद से भी दूर रखने में मददगार होती है।

संपर्क : 34/242, सेक्टर–3, प्रतापनगर, जयपुर–302033
मो.: 7838897877

ग्रामीण भारत की कहानी बदल रही है स्वामित्व योजना

डॉ. सत्यवान सौरभ
स्वतंत्र पत्रकार

स्वामित्व की आवश्यकता भारत में ग्रामीण भूमि सर्वेक्षण और बंदोबस्त का दशकों से अभाव रहा है। कई राज्यों में गांवों के आबादी क्षेत्रों के नक्शे और दस्तावेजीकरण का अभाव रहा है।

स्वामित्व (ग्रामीण क्षेत्रों में सुधारित प्रौद्योगिकी के साथ गाँवों का सर्वेक्षण और मानचित्रण) पहल से भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में बदलाव आ रहा है। इस पहल के तहत सरकार द्वारा सटीक संपत्ति स्वामित्व डेटा और स्पष्ट स्वामित्व रिकॉर्ड के प्रावधान से भूमि विवादों में कमी आ रही है। इस कार्यक्रम के माध्यम से भारत के ग्रामीण सशक्तीकरण और शासन के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण मोड़ आया है। इसके अलावा, यह कार्यक्रम परिसंपत्तियों की बिक्री की सुविधा प्रदान करता है, बैंक ऋण के माध्यम से संस्थागत ऋण को संभव बनाता है, संपत्ति से संबंधित विवादों को कम करता है, ग्रामीण क्षेत्रों में संपत्ति कराधान और संपत्ति मूल्यांकन में सुधार करता है और पूरी तरह से गाँव-स्तरीय योजना बनाने की अनुमति देता है।

स्वामित्व की आवश्यकता भारत में ग्रामीण भूमि सर्वेक्षण और बंदोबस्त का दशकों से अभाव रहा है। कई राज्यों में गांवों के आबादी क्षेत्रों के नक्शे और दस्तावेजीकरण का अभाव रहा है। आधिकारिक रिकॉर्ड की अनुपस्थिति के कारण, इन क्षेत्रों में संपत्ति के मालिक अपने घरों को अपग्रेड करने या अपनी संपत्ति को ऋण और अन्य वित्तीय सहायता के लिए वित्तीय संपत्ति के रूप में उपयोग करने में असमर्थ थे, जिससे उनके लिए संस्थागत ऋण प्राप्त करना मुश्किल हो गया। इस तरह के दस्तावेजीकरण की कमी ने 70 से अधिक वर्षों तक ग्रामीण भारत के आर्थिक विकास में बाधा डाली। यह स्पष्ट हो गया कि आर्थिक सशक्तीकरण के लिए कानूनी रूप से मान्यता प्राप्त संपत्ति रिकॉर्ड के महत्त्व के आलोक में एक समकालीन समाधान की आवश्यकता थी। गाँव के आबादी क्षेत्रों के सर्वेक्षण और मानचित्रण के लिए अत्याधुनिक ड्रोन तकनीक का उपयोग करने के लिए स्वामित्व योजना विकसित की गई थी। पीएम स्वामित्व ने जल्द ही खुद को इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण मोड़ साबित कर दिया।

पंचायती राज मंत्रालय की एक केंद्रीय क्षेत्र की पहल को स्वामित्व (ग्रामीण क्षेत्रों में सुधारित प्रौद्योगिकी के साथ गाँवों का सर्वेक्षण और मानचित्रण) कहा जाता है। इसे नौ राज्यों में कार्यक्रम के पायलट चरण (2020-2021) के

सफल समापन के बाद 24 अप्रैल, 2021 को राष्ट्रीय पंचायती राज दिवस पर देश भर में पेश किया गया था। यह कार्यक्रम भूमि के टुकड़ों का मानचित्रण करने और गाँव के घरेलू मालिकों को 'अधिकारों का रिकॉर्ड' प्रदान करने के लिए ड्रोन तकनीक का उपयोग करता है। कानूनी स्वामित्व कार्ड, जिन्हें संपत्ति कार्ड या शीर्षक विलेख के रूप में भी जाना जाता है, तब संपत्ति के मालिकों को जारी किए जाते हैं, जो ग्रामीण आबादी वाले (आबादी) क्षेत्रों में संपत्ति के स्पष्ट स्वामित्व की स्थापना की दिशा में एक सुधारात्मक कदम है।

सर्वे ऑफ इंडिया और संबंधित राज्य सरकारों के बीच एक समझौता ज्ञापन स्वामित्व योजना को लागू करने के लिए रूपरेखा द्वारा प्रदान की गई बहु-चरणीय संपत्ति कार्ड निर्माण प्रक्रिया में पहला कदम है। सभी पैमानों पर राष्ट्रीय स्थलाकृतिक डेटाबेस तैयार करने के लिए, विभिन्न पैमानों पर स्थलाकृतिक मानचित्रण के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग करता है, जैसे उपग्रह इमेजरी, मानव रहित हवाई वाहन या ड्रोन प्लेटफॉर्म और हवाई फोटोग्राफी ड्रोन। समझौता ज्ञापन के पूरा होने के बाद एक सतत संचालन संदर्भ प्रणाली स्थापित की जाती है। एक आभासी बेस स्टेशन जो लंबी दूरी की, अत्यधिक सटीक नेटवर्क आर टी के (रियल-टाइम किनेमेटिक) सुधार प्रदान करता है, संदर्भ स्टेशनों के इस नेटवर्क द्वारा प्रदान किया जाता है। अगला चरण यह निर्धारित करना है कि किन गाँवों का सर्वेक्षण किया जाएगा और जनता को संपत्ति मानचित्रण प्रक्रिया के बारे में सूचित करना है। प्रत्येक ग्रामीण संपत्ति को चूना पत्थर (चुन्ना) से चिह्नित किया जाता है, जो गाँव के आबादी क्षेत्र (आबाद क्षेत्र) को चित्रित करता है यह जाँच/आपत्ति प्रक्रिया का समापन है, जिसे संघर्ष/विवाद समाधान के रूप में भी जाना जाता है। फिर सम्पत्ति पत्रक या अंतिम संपत्ति कार्ड/शीर्षक विलेख तैयार किए जाते हैं। आप इन कार्डों को खरीद सकते हैं।

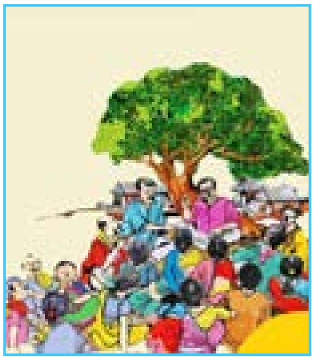

इस कार्यक्रम के लाभों में एक समावेशी समाज शामिल है। गाँवों में कमजोर आबादी की सामाजिक-आर्थिक स्थिति संपत्ति के अधिकारों तक उनकी पहुँच के साथ सकारात्मक रूप से सहसम्बद्ध है। स्वामित्व योजना इसे संभव बनाने का प्रयास करती है। आबादी की स्पष्ट रूप से परिभाषित सीमा की कमी के कारण भूमि-संघर्ष के मामलों की संख्या बहुत अधिक है। स्थानीय स्तर पर संघर्षों के अंतर्निहित कारणों को सम्बोधित करना स्वामित्व योजना का लक्ष्य है। बेहतर ग्राम पंचायत विकास योजनाएँ, जो उच्च-रिजॉल्यूशन वाले डिजिटल मानचित्रों का उपयोग करती हैं, सड़कों, स्कूलों, सामुदायिक स्वास्थ्य सुविधाओं, नदियों, स्ट्रीटलाइट्स और अन्य बुनियादी ढाँचे में सुधार लाती हैं। अधिक सुलभ संसाधनों और प्रभावी वित्तीय प्रबंधन के माध्यम से लोगों को अपनी संपत्ति को संपार्श्विक के रूप में मुद्रीकृत करने में मदद करना मुख्य लक्ष्य है। इसके अतिरिक्त, जिन राज्यों में संपत्ति कर लगाया जाता है, वहाँ इसे सरल बनाने से निवेश को बढ़ावा मिलता है और व्यापार करना आसान हो जाता है, जिससे भारत की आर्थिक वृद्धि को बढ़ावा मिलता है।

भूमि स्वामित्व से जुड़े लंबे समय से चले आ रहे मुद्दों को विकास और सशक्तीकरण के अवसरों में बदलकर, स्वामित्व योजना ग्रामीण भारत की कहानी बदल रही है। यह योजना, जिसमें डिजिटल संपत्ति कार्ड और परिष्कृत ड्रोन सर्वेक्षण शामिल हैं, केवल सीमाओं और नक्शों के बजाय संभावनाओं और सपनों के बारे में है।

भूमि स्वामित्व से जुड़े लंबे समय से चले आ रहे मुद्दों को विकास और सशक्तीकरण के अवसरों में बदलकर, स्वामित्व योजना ग्रामीण भारत की कहानी बदल रही है। यह योजना, जिसमें डिजिटल संपत्ति कार्ड और परिष्कृत ड्रोन सर्वेक्षण शामिल हैं, केवल सीमाओं और नक्शों के बजाय संभावनाओं और सपनों के बारे में है। स्वामित्व सिर्फ एक सरकारी कार्यक्रम से कहीं ज्यादा बन गया है, क्योंकि गाँव इस बदलाव का स्वागत करते हैं, यह बढ़ी हुई आजादी, ज्यादा चतुराईपूर्ण योजना और ज्यादा एकजुट, शक्तिशाली ग्रामीण भारत के पीछे एक प्रेरक शक्ति है। स्वामित्व योजना के परिणामस्वरूप ग्रामीण भारत बदल रहा है। भूमि स्वामित्व से जुड़ी लंबे समय से चली आ रही कठिनाइयाँ विकास और आत्मनिर्णय के अवसरों में बदल रही हैं। बाधाओं को दूर करने, विवादों को निपटाने और संपत्ति को आर्थिक उन्नति के लिए एक शक्तिशाली साधन में बदलने के लिए नवाचार और समावेशिता को जोड़ा जा रहा है। डिजिटल संपत्ति कार्ड और परिष्कृत ड्रोन सर्वेक्षण इस बात के दो उदाहरण हैं कि कैसे योजना सरल सीमाओं और मानचित्रों से आगे जाती है। यह अवसरों और आकांक्षाओं से भरपूर है। गाँव इस बदलाव को अपना रहे हैं और स्वामित्व महज सरकारी कार्यक्रम से आगे बढ़ रहा है। आत्मनिर्भरता, बेहतर योजना और अधिक एकजुट ग्रामीण भारत सभी इसके द्वारा गति प्राप्त कर रहे हैं।

संपर्क : 333, परी वाटिका, कौशल्या भवन, बड़वा (सिवानी), भिवानी, हरियाणा– 127045, मोबाइल : 9466526148

परीक्षा का उद्देश्य समग्र ज्ञान और विकास होना चाहिए : नरेन्द्र मोदी

यह समझना आवश्यक है कि क्या खा रहे हैं और कितने बजे खा रहे हैं। अनियमित खान-पान से स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है।

'परीक्षा पे चर्चा 2025' कार्यक्रम प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का एक ऐसा मंच है, जहाँ वे छात्रों को परीक्षा के तनाव से मुक्त करने के लिए प्रेरित करते हैं। उनकी सलाह न केवल परीक्षा के लिए बल्कि पूरे जीवन के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। इस कार्यक्रम से छात्रों को आत्मविश्वास बढ़ाने, तनाव से निपटने और जीवन में संतुलन बनाए रखने के बहुमूल्य सुझाव दिए। प्रधानमंत्री मोदी ने यह संदेश दिया कि परीक्षा केवल नंबरों तक सीमित नहीं होनी चाहिए, बल्कि इसका उद्देश्य समग्र ज्ञान और विकास होना चाहिए। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 10 फरवरी, 2025 को 'परीक्षा पे चर्चा' कार्यक्रम के आठवें संस्करण में देशभर के छात्रों, अभिभावकों और शिक्षकों से संवाद किया। इस दौरान प्रधानमंत्री ने जीवन, शिक्षा, सेहत और सफलता से जुड़े अनेक पहलुओं पर प्रकाश डाला।

स्वस्थ जीवनशैली और खान-पान पर जोर

प्रधानमंत्री मोदी ने कहा कि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क का वास होता है। उन्होंने खान-पान को लेकर कई महत्त्वपूर्ण बातें साझा कीं :

समय पर भोजन करें : यह समझना आवश्यक है कि क्या खा रहे हैं और कितने बजे खा रहे हैं। अनियमित खान-पान से स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है।

घर का बना खाना सर्वश्रेष्ठ : जंक फूड से बचें और संतुलित आहार लें। घर में बने ताजे और पोषक तत्त्वों से भरपूर भोजन का सेवन करें।

पानी को धीरे-धीरे पीएँ : पानी के स्वाद को समझें और उसे आहिस्ता-आहिस्ता पीने की आदत डालें। यह पाचन क्रिया को बेहतर बनाता है।

मिलेट्स अपनाएँ : प्रधानमंत्री ने मिलेट्स के फायदों को समझाया और बच्चों को पारंपरिक आहार अपनाने की सलाह दी। उन्होंने बताया कि यह पाचन के लिए अच्छा होता है और ऊर्जा प्रदान करता है।

नींद और दिनचर्या का महत्व

प्रधानमंत्री मोदी ने विद्यार्थियों को नियमित दिनचर्या अपनाने की सलाह दी। उन्होंने कहा कि समय पर सोना और जागना आवश्यक है। छात्रों को रात में जल्दी सोने और सुबह जल्दी उठने की आदत डालनी चाहिए। इसके अलावा उन्होंने सूर्य स्नान (सन बाथ) के महत्त्व पर भी प्रकाश डाला। सूर्योदय के समय धूप लेना न केवल शरीर के लिए लाभदायक होता है बल्कि मानसिक शांति भी प्रदान करता है।

परीक्षा का तनाव दूर करने के टिप्स

प्रधानमंत्री मोदी ने परीक्षा को लेकर छात्रों की चिंता दूर करने के लिए महत्त्वपूर्ण सुझाव दिए :

नंबर से ज्यादा ज्ञान पर ध्यान दें : केवल अच्छे अंक प्राप्त करने की चिंता न करें, बल्कि नई चीजें सीखने पर ध्यान दें।

परीक्षा के परिणाम से न डरें : रिजल्ट का तनाव लेने के बजाय खुद को बेहतरीन प्रयास करने के लिए प्रेरित करें।

समय प्रबंधन करें : एक संतुलित अध्ययन योजना बनाएँ, ताकि पढ़ाई बोझ न लगे।

धैर्य और टीमवर्क लीडरशिप के लिए आवश्यक गुण हैं : लीडर बनने के लिए सबसे जरूरी है संयम और सहयोग की भावना।

अभिभावकों और शिक्षकों के लिए सुझाव

मोदी ने माता-पिता से अपील की कि वे बच्चों की तुलना किसी और से न करें। उन्होंने कहा कि प्रत्येक बच्चे की विशेषता अलग होती है, इसलिए उन्हें अपनी रुचि के अनुसार आगे बढ़ने का अवसर देना चाहिए। बच्चों को आत्मनिर्भर और स्वतंत्र सोचने के लिए प्रोत्साहित करना आवश्यक है।

ध्यान और योग के फायदे

प्रधानमंत्री मोदी ने मेडिटेशन और योग को मानसिक शांति और ध्यान केंद्रित करने के लिए आवश्यक बताया। उन्होंने कार्यक्रम में उपस्थित छात्रों को ध्यान अभ्यास भी करवाया। योग न केवल शारीरिक बल्कि मानसिक संतुलन बनाए रखने में भी मदद करता है।

प्रधानमंत्री ने बच्चों को खुद को मोटिवेट करने और आत्मनिर्भर बनने की सलाह दी। उन्होंने कहा कि खुद के लिए छोटे-छोटे लक्ष्य तय करें और उन्हें पूरा करने के बाद खुद को प्रोत्साहित करें। इससे आत्मविश्वास बढ़ता है और सफलता की राह आसान होती है।

तकनीक और शिक्षा का सही संतुलन

प्रधानमंत्री ने तकनीक के सही उपयोग पर जोर दिया। उन्होंने कहा कि तकनीक का इस्तेमाल केवल मनोरंजन के लिए नहीं बल्कि ज्ञानवर्धन के लिए भी किया जाना चाहिए। आधुनिक तकनीकों का उपयोग करके छात्र अपनी पढ़ाई को और अधिक प्रभावी बना सकते हैं।

बच्चों को किताबी कीड़ा न बनने की सलाह

प्रधानमंत्री ने बच्चों को केवल किताबों तक सीमित न रहने की सलाह दी। उन्होंने कहा कि शिक्षा के साथ-साथ अन्य गतिविधियों में भी रुचि लेना जरूरी है। खेल-कूद, संगीत, कला और अन्य रचनात्मक गतिविधियाँ मानसिक विकास के लिए आवश्यक हैं।

सकारात्मक सोच और आत्मनिर्भरता

प्रधानमंत्री ने बच्चों को खुद को मोटिवेट करने और आत्मनिर्भर बनने की सलाह दी। उन्होंने कहा कि खुद के लिए छोटे-छोटे लक्ष्य तय करें और उन्हें पूरा करने के बाद खुद को प्रोत्साहित करें। इससे आत्मविश्वास बढ़ता है और सफलता की राह आसान होती है।

(पाँचवाँ स्तंभ डेस्क)

कविता | डॉ. निर्मल प्रवाल

नदी हूँ

पहाड़ी से गिरती
खड्ड से उठती
बहती हुई गाँव-गाँव
शहरों शहरों
कहीं खुलकर बही जंगल जोहड़ों में
कहीं बंधी बंधन बाँधों में
कभी पुल के नीचे से भी
गुजरना स्वीकारा
स्वीकारा गंदे काले कलूटे नालों को
बहती-बहती पहुँची घरों में
कभी खेत खलिहानों में नहर बनी
शहरों की रौनक
अय्याशियों के अड्डों के निकट
चार दिवारी में सिमटी झील बनी

नदी हूँ, नारी हूँ
हर दर्द तकलीफ उठाती
खुद के अस्तित्व को भूल
धरा पर फैले विशाल सागर बनाती हूँ।

संपर्क : 7690040827

संचार और जागरूकता का प्रभावी माध्यम

प्रमोद मौर्य

रेडियो का आविष्कार 19वीं शताब्दी के अंत में हुआ था और 20वीं शताब्दी में यह जनसंचार का एक महत्त्वपूर्ण साधन बन गया।

रेडियो संचार का एक अत्यंत प्रभावी और विश्वसनीय माध्यम है, जो दशकों से लोगों को जोड़ता आ रहा है। आधुनिक तकनीक के बावजूद इसकी प्रासंगिकता बनी हुई है और यह समाज को जागरूक करने, शिक्षित करने और मनोरंजन प्रदान करने का कार्य करता रहेगा। विश्व रेडियो दिवस न केवल रेडियो के महत्त्व को पहचानने का अवसर है, बल्कि इस माध्यम को और अधिक सशक्त बनाने की दिशा में कार्य करने की प्रेरणा भी देता है। हर साल 13 फरवरी को 'विश्व रेडियो दिवस' मनाया जाता है, जो रेडियो की व्यापक पहुँच, इसकी सामाजिक भूमिका और प्रभाव को उजागर करने का अवसर प्रदान करता है। यह दिवस उन लोगों को सम्मानित करने का भी एक माध्यम है, जिन्होंने रेडियो के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।

रेडियो का आविष्कार 19वीं शताब्दी के अंत में हुआ था और 20वीं शताब्दी में यह जनसंचार का एक महत्त्वपूर्ण साधन बन गया। दुनिया का पहला व्यावसायिक रेडियो स्टेशन 1920 में शुरू हुआ, जिसने सूचनाओं, समाचारों और मनोरंजन को जन-जन तक पहुँचाने का कार्य किया। यूनेस्को ने 2011 में 13 फरवरी को विश्व रेडियो दिवस के रूप में घोषित किया, क्योंकि इसी दिन, 13 फरवरी, 1946 को संयुक्त राष्ट्र रेडियो की स्थापना हुई थी। इसके बाद 2012 से यह दिवस आधिकारिक रूप से पूरी दुनिया में मनाया जाने लगा।

भारत में रेडियो का इतिहास काफ़ी पुराना है। ऑल इंडिया रेडियो (आकाशवाणी) की स्थापना 1936 में हुई थी, जो आज भी देश के सबसे बड़े और प्रभावी रेडियो नेटवर्क में से एक है। आकाशवाणी के माध्यम से न केवल समाचार और संगीत कार्यक्रम प्रसारित होते हैं, बल्कि शिक्षा, कृषि, विज्ञान और सामाजिक जागरूकता से जुड़े कार्यक्रम भी प्रस्तुत किए जाते हैं। रेडियो की सबसे बड़ी खासियत इसकी सुलभता, कम लागत और प्रभावी संचार है। यह उन लोगों तक भी जानकारी पहुँचाता है, जो इंटरनेट और टेलीविजन जैसी आधुनिक तकनीकों से वंचित हैं। खासकर ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में रेडियो आज भी सूचनाओं और मनोरंजन का मुख्य स्रोत बना हुआ है।

इस वर्ष विश्व रेडियो दिवस 2025 का थीम है 'रेडियो और जलवायु परिवर्तन'। यह विषय

रेडियो की सार्थकता और इसकी व्यापक पहुँच को दर्शाता है। वर्तमान समय में पूरा विश्व जलवायु परिवर्तन की गंभीर चुनौती का सामना कर रहा है। ऐसे में जागरूकता फैलाने, श्रोताओं को शिक्षित करने और सामूहिक कारवाई को प्रोत्साहित करने के लिए रेडियो एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। यह लोगों को सही जानकारी देकर उन्हें पर्यावरण संरक्षण के प्रति प्रेरित करता है और जलवायु परिवर्तन पर लगाम कसने के लिए एक प्रभावी उपकरण के रूप में उभर रहा है। इस विश्व रेडियो दिवस पर हम सभी इस प्रभावशाली माध्यम का उपयोग जलवायु परिवर्तन से निपटने और एक सतत भविष्य की ओर बढ़ने के लिए करने का संकल्प लें।

तकनीकी प्रगति के साथ रेडियो के स्वरूप में भी बदलाव आया है। अब लोग पारंपरिक रेडियो के साथ-साथ इंटरनेट रेडियो, पॉडकास्टिंग और वेब रेडियो की ओर भी आकर्षित हो रहे हैं। रेडियो का भविष्य 'डिजिटल रेडियो (DAB & Digital Audio Broadcasting) का विस्तार, इंटरनेट रेडियो और पॉडकास्टिंग का बढ़ता चलन और स्मार्टफोन और स्मार्ट स्पीकर के जरिए रेडियो सुनने की बढ़ती आदत' शामिल है।

भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी ने देश-दुनिया के सभी लोगों से जुड़ने के लिए, उनसे संवाद करने के लिए रेडियो जैसा एक सर्व सुलभ माध्यम को ही चुना और रेडियो के जरिए आज विश्व के सबसे ख्याति प्राप्त कार्यक्रम 'मन की बात' के जरिए जन-जन तक अपनी बात पहुँचाते हैं और लोगों की बात सुनते हैं 'मन की बात रेडियो के साथ'।

विश्व रेडिया दिवस मौके पर 'रेडियो की दुनिया, आवाजों का संचार' कार्यक्रम पर उदय शर्मा द्वारा वरिष्ठ कार्यक्रम उद्घोषक संगीता सिन्हा (संपादक, पाँचवाँ स्तंभ, पत्रिका दिल्ली), आकाशवाणी, दिल्ली से खास बातचीत-

उदय शर्मा : रेडियो से आपका जुड़ाव कैसे हुआ? कैसे आपने रेडियो प्रेजेंटेशन के इस क्षेत्र में कदम रखा?

संगीता सिन्हा : मेरे पिताजी इंजीनियर थे और हम लोग इंडियन ऑयल के टाउनशिप में रहते थे। वहाँ पर शनिवार, रविवार को फिल्म की स्क्रीनिंग होती थी। मतलब फिल्में देखना और उनके गाने भी सुनना बड़ा आनंद आता था और वही गाने जब रेडियो पर सुनते तो बहुत अच्छा लगता था, तो रेडियो से ऐसे ही थोड़ा-सा जुड़ाव शुरुआत में हुआ, फिर मेरे पिताजी ने मेरे जन्मदिन पर एक रेडियो उपहार में दिया, तब मैं 11वीं क्लास में थी। उसके बाद उस रेडियो पर कमेंट्री सुनना/ गाने सुनना, सिलसिला शुरू हो गया। उस समय हम लोग विविध भारती बहुत सुनते थे। आकाशवाणी में युववाणी एक सेक्शन है, उस पर महफिल प्रोग्राम के लिए ऑडिशन हुआ करता था, जिसमें एक ही बार आपको प्रोग्राम करने का मौका मिलता था। महफिल प्रोग्राम हमने भी किया, काफी लोगों ने तारीफ की तो जोश बढ़ा। विविध भारती में ऑडिशन दिया और फिर विविध भारती में तीन-चार साल काम करने के बाद साल 1994 में FM रेडियो आया तो मैं वहाँ पर RJ बन गई और आज तक वहाँ पर काम कर रही हूँ।

भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी ने देश-दुनिया के सभी लोगों से जुड़ने के लिए, उनसे संवाद करने के लिए रेडियो जैसा एक सर्व सुलभ माध्यम को ही चुना और रेडियो के जरिए आज विश्व के सबसे ख्याति प्राप्त कार्यक्रम 'मन की बात' के जरिए जन-जन तक अपनी बात पहुँचाते हैं और लोगों की बात सुनते हैं 'मन की बात रेडियो के साथ'।

उदय शर्मा : रेडियो की शुरुआत की बात करें तो यह शिक्षा सूचना और मनोरंजन के क्षेत्र के लिए ही किया गया था। आज वर्तमान समय में आप रेडियो को कहाँ आँकती हैं?

संगीता सिन्हा : रेडियो की शुरुआत तो बहुत पहले हो गई थी, जब मार्कोनी ने रेडियो का आविष्कार किया। एक तरह से कहना चाहिए, 1920 रेडियो का 'स्वर्ण काल' था। प्रथम विश्व युद्ध ने रेडियो के विकास में बड़ी अहम भूमिका निभाई। युद्ध के समय रेडियो सेना और आम लोगों के लिए खबरें प्राप्त करने का एक अहम माध्यम बना था। ग्रीन रेवोल्यूशन में रेडियो का बहुत बड़ा योगदान है। किसानों को रेडियो ने नई-नई तकनीके, नई-नई बातें सिखाई। दुनिया में नया क्या हो रहा है, उसके बारे में जानकारी दी। शिक्षा से रेडियो अलग-अलग तरीके से हमेशा ही जुड़ा रहा, कभी एक नाटिका के माध्यम से, कोई संदेश, कभी गानों के बीच में जागरूकता बढ़ाने वाली बातें कही जाती रही हैं, कभी सेहत से जुड़ी बातें बताई जाती हैं। जैसे-जैसे समय बदला, उस तरह से रेडियो बदलाव के साथ आगे बढ़ता गया है। अब रेडियो के विकास में बड़ा पड़ाव है डिजिटल होना। AI का समय आ गया है। रेडियो बदल रहा है, सुनने वाले बदल रहे हैं, आज की जेनरेशन डिजिटल को अच्छी तरह से समझती है, इस्तेमाल करती है। 1990 के बाद से रेडियो डिजिटल युग में एक तरह से परिवर्तित हो गया और सैटेलाइट प्रसारण, इंटरनेट पर रेडियो की उपलब्धता, पॉडकास्ट में बदलाव और आज डिजिटल युग में भी रेडियो जरूरत बनी हुई है और प्रासंगिक भी है।

उदय शर्मा : हम आपसे जानना चाहेंगे कि जो वर्तमान श्रोता हैं या जो आना चाहते हैं, रेडियो के फील्ड में उनके लिए आप

क्या कहना चाहेंगी? वे किस तरह से तैयारी करें, ताकि वे एक अच्छे रेडियो उद्घोषक बन सकें।

संगीता सिन्हा : आज कितने ही माध्यम आ चुके हैं, लेकिन रेडियो की पहुँच जहाँ तक है, वहाँ हर माध्यम नहीं पहुँच पाता। आपको इंटरनेट के लिए नेटवर्क चाहिए और बहुत सारी चीजें चाहिए होती है, जो हो सकता है कि सबके पास न हो; लेकिन शुरू से ही रेडियो एक ऐसा माध्यम रहा है, जो हर किसी के पास पहुँचता है। गाँव-गाँव तक शिक्षा, देश-विदेश में क्या हो रहा है, आपके दरवाजे तक रेडियो किसी-ना-किसी माध्यम से पहुँच जाता है। इसलिए यह एक महत्त्वपूर्ण माध्यम है। एक रेडियो अनाउंसर को बहुत-सी जानकारी होनी चाहिए, क्योंकि उसे दुनिया को बताना है कि कहाँ क्या हो रहा है, आप क्या कह रहे हैं? किससे कह रहे हैं? क्यों कह रहे हैं? आपकी बात कोई क्यों सुने? आपके कहने का तरीका सामने वाले को अच्छा लग रहा है कि नहीं? ये सब एक रेडियो अनाउंसर की योग्यता होती है, आपको अपनी आवाज को मॉड्यूलेशन का भी ध्यान रखना होता है। रेडियो अनाउंसर को जानकारियों से भरा हुआ होना चाहिए, न्यूज पेपर पढ़िए और उसमें से थोड़ा-थोड़ा निकाल कर रेडियो पर कहते रहे, सुनाते रहे लोगों को जागरूक करते रहें, यही एक अनाउंसर का काम है। हर जगह अलग-अलग बातें हैं, जैसे मछुआरे हैं उनको रेडियो ये सूचना देता है कि किस समय समुद्र का मौसम कैसा रहेगा, उस समय आप मछली पकड़ने जा सकते हैं या नहीं, यह उनके लिए जरूरी बातें हैं। आज कम्युनिटी रेडियो आ गया है। अलग-अलग टारगेट ग्रुप्स के लिए रेडियो चैनल हैं, उनके हिसाब से भी आपको अलग से तैयारी करनी पड़ती है। कैलिफोर्निया में जो अभी आग लगी, वहाँ पर बहुत सारे घर जल गए, लेकिन जानमाल का कोई नुकसान नहीं हुआ, वो सिर्फ इसी वजह से, क्योंकि मौसम विज्ञानी ये पहले से ही रेडियो के माध्यम से उन्हें सूचना दे दी थी। इस बार 'विश्व रेडियो दिवस' का थीम 'जलवायु परिवर्तन' को समर्पित है। हमारे मौसम विज्ञानी रेडियो के माध्यम से दूर-दराज में पहाड़ों तक अपनी पहुँच बनाये हुए हैं। जहाँ बर्फ गिरी हुई है, रास्ते बंद हैं, किसी का जाना मुश्किल है, लेकिन रेडियो की तरंगें वहाँ तक पहुँच जाती हैं, तो रेडियो का बहुत महत्त्व है और उद्घोषकों की भी जिम्मेदारी बड़ी है तथा अगर वे इन बातों का ध्यान रखें तो एक अच्छे उद्घोषक बन सकते हैं।

जब रेडियो की शुरुआत हुई थी, क्लिष्ट हिंदी अच्छी हिंदी बोली जाती थी। कहना चाहिए मानक हिंदी बोली जाती थी। लोग मानते थे कि रेडियो में जो कहा जा रहा है, वह सही ही होगा, रेडियो की अपनी विश्वसनीयता रही है। लोग रेडियो के समाचार वाचकों को सुनकर सीखते थे। आज बोल-चाल की भाषा हिंग्लिश का जमाना आ गया है।

उदय शर्मा : आज मीडिया में कांटेंट की भाषा बहुत चर्चा में है, क्या रेडियों में भी ऐसी बातों का खयाल रखा जाता है?

संगीता सिन्हा : जब रेडियो की शुरुआत हुई थी, क्लिष्ट हिंदी अच्छी हिंदी बोली जाती थी। कहना चाहिए मानक हिंदी बोली जाती थी। लोग मानते थे कि रेडियो में जो कहा जा रहा है, वह सही ही होगा, रेडियो की अपनी विश्वसनीयता रही है। लोग रेडियो के समाचार वाचकों को सुनकर सीखते थे। आज बोल-चाल की भाषा हिंग्लिश का जमाना आ गया है। हिंदी और इंग्लिश मिला कर एक भाषा बनी है, लोग इस तरह की भाषा पसंद कर रहे हैं, तो रेडियो भी ये जुबान इस्तेमाल करने में परहेज नहीं करता। हाँ, प्रिंट मीडिया की आप जहाँ तक बात करें, तो इसमें थोड़ी-सी भाषा मिली-जुली मिलती है। लेकिन इस माध्यम में अभी इतना बदलाव नहीं हुआ जितना कि रेडियो में हुआ। प्रिंट में अभी भी ध्यान रखा जाता है, आप अगर हिंदी में लिख रहे हैं तो आप सरल और सभ्य हिंदी में ही लिखे अंग्रेजी लिख रहे हैं, तो अंग्रेजी में ही लिखें। ये तो हुई भाषा की बात; लेकिन जहाँ तक कांटेंट का सवाल है, रेडियो हमेशा ही सजग रहा है। खास तौर पर आकाशवाणी की बात करूँ तो! और बातें छोड़ भी दें तो यहाँ ध्यान रखा जाता है कि आपकी बातों से कोई आहत हो। इस माध्यम में आज भी एक सभ्य भाषा का इस्तेमाल किया जाता है, यहाँ उद्घोषक आज भी इस बात का ध्यान रखते हैं कि सामग्री में अश्लीलता न हो। लोग एक साथ बैठकर परिवार के साथ रेडियो सुन सकें और जो उद्घोषक बनना चाहते हैं, उनसे मैं कहना चाहूँगी कि उद्घोषक बनने के लिए आपको इस माध्यम से प्यार होना चाहिए। आप रेडियो के श्रोता होने चाहिए, आप रेडियो जितना ज्यादा सुनेंगे, उतने ही अच्छे अनाउंसर बन सकेंगे।

विश्व रेडियो दिवस पर उन सभी लोगों को, जो रेडियो से किसी भी तरह से जुड़े हुए हैं, उन्हें हमारी ढेरों शुभकामनाएँ। ©पाँ.स्तं.

कविताएँ

सुशांत सुप्रिय

स्त्रियाँ

हरी-भरी फसलों-सी
प्रसन्न है उनकी देह
मैदानों में बहते जल-सा
अनुभवी है उनका जीवन
पुरखों के गीतों-सी
खनकती है उनकी हँसी
रहस्यमयी नीहारिकाओं-सी
आकर्षक हैं उनकी आँखें
प्रकृति में ईश्वर-सा मौजूद है
उनका मेहनती वजूद

दुनिया से थोड़ा और
जुड़ जाते हैं हम
उनके ही कारण

एक सजल संवेदना-सी

उसे आँखों से
कम सूझता है अब
घुटने जवाब देने लगे हैं
बोलती है तो कभी-कभी
काँपने लगती है उसकी जबान
घर के लोगों के राडार पर
उसकी उपस्थिति अब
दर्ज नहीं होती
लेकिन वह है कि
बहे जा रही है अब भी
एक सजल संवेदना-सी
समूचे घर में...
अरे बच्चों ने खाना खाया कि नहीं
कोई पौधों को पानी दे देना जरा
बारिश भी तो ठीक से
नहीं हुई है इस साल

वह अनपढ़ मजदूरनी
उस अनपढ़ मजदूरनी के पास थे
जीवन के अनुभव
मेरे पास थी
कागज-कलम की बैसाखी

मैं उस पर कविता लिखना
चाह रहा था
जिसने रच डाला था
पूरा महाकाव्य जीवन का

सृष्टि के पवित्र ग्रंथ-सी थी वह
जिसका पहला पन्ना खोलकर
पढ़ रहा था मैं

गेंहूँ की बालियों में भरा
जीवन का रस थी वह
और मैं जैसे
आँगन में गिरा हुआ
सूखा पत्ता

उस कंदील की रोशनी से
उधार लिया मैंने जीवन में उजाला

उस दीये की लौ के सहारे
पार की मैंने कविता की सड़क

संपर्क : 8512070086

कहानी

सुरजा

दिविक रमेश
वरिष्ठ साहित्यकार

लेकिन पिछले कुछ दिनों से भरपाई में साफ बदलाव नजर आ रहा था। वह बहुत कम बोलने लगी थी। किसी बात पर तुनकती भी नहीं।

भरपाई पैंतीस से ज्यादा क्या होगी। लगती जरूर पैंतालीस की है। लेकिन भरपाई जानती है कि वह पैंतीस से दो-चार दिन नीचे भले ही हो, ऊपर एक घड़ी भी नहीं है। भीतर ही भीतर यह सोचकर खुद को किसी जवान से कम नहीं समझती। पंद्रह साल की उम्र में ब्याह हो गया था। यह तो ऊपरा तली के पाँच-सात बालक हो गये वरना पैंतालीस नहीं, तीस की नजर आती। लेकिन भरपाई से कोई यह वाक्य बोलकर तो देखे। नोंच न ले तो मुंह। सारा मुहल्ला सिर पर उठा लेगी। बड़े-बूढ़े भी अपने कान दबोचे बैठे रह जाएँगे। उस समय भरपाई जो कह दे, वह कम है। वह यह भी कह सकती है....''कौन-सा किसी गैर का लँगोट ढीला हो गया है। अपणे मर्द से जणे हैं... पाँच हैं तो। दस हैं तो।'' परिवार नियोजन वाले तक उसके मुंह लगते काँपते हैं। ऊपर की ऊपर निकल जाते हैं। कौन सुने उसकी खुल्लमखुल्ला बातें।

लेकिन पिछले कुछ दिनों से भरपाई में साफ बदलाव नजर आ रहा था। वह बहुत कम बोलने लगी थी। किसी बात पर तुनकती भी नहीं। किसी ने ऐसी वैसी बात कह भी दी तो मुस्कराकर टाल देती है। उसकी मुस्कराहट में बेबसी जरूर झलकती है। आस-पड़ोस की औरतों में तो यह जानकारी जोर पकड़ती जा रही थी कि भरपाई की बड़ी से छोटी बेटी सुरजा कई दिनों से स्कूल नहीं जा रही है। सुरजा कोई पन्द्रह-साढ़े-पन्द्रह साल की होगी। औरतों के लिए यह जानकारी एक बहुत ही बड़ा रहस्य बनी हुई है और जिज्ञासा का कारण भी। आखिर दो-चारों ने हिम्मत की और चेहरों पर हितैषी वाला भाव मलकर पहुँच ही गयीं भरपाई के यहाँ। भरपाई शायद चावल फटक रही थी। छाज एक तरफ रख कर उसने सबसे बड़ी औरत की तरफ अपने नीचे से पीढ़ा निकालकर सरका दिया। औरतें बैठ गईं तो इधर-उधर की चर्चाएँ होती रहीं। आखिर दस-पन्द्रह मिनट तो लग ही गए होंगे औरतों को काम की बात पर आते-अवाते। एक ने पूछ ही तो लिया...'सुरजा को स्कूल नहीं जाते देखा भरपाई। क्या बीमार है?'

भरपाई ने उन औरतों की तरफ कुछ ऐसी

आँखों से देखा, जैसे तौल रही हो कि वे सुरजा के बारे में किस हद तक जानती हैं। थोड़ी ही देर में आश्वस्त-सी होकर बोली, 'इब सुरजा स्कूल ना जावेगी बहन। इस साल दसमीं का निमतहान दिवा दूँगी बस।' (अब सुरजा स्कूल नहीं जाएगी बहन। इस साल दसवीं का इम्तहान दिलवा दूँगी बस) फिर भरपाई ने एक लंबी-सी साँस खींचकर कहा, 'ठीक-ठाक लड़के मिलेंगे तो बड़ली अर इसके हाथ एक साथ पीले करके गंगा नहा लूँगी। तुम जाणो, एक अकेली जान ही तो है कमाऊ घर में। इस कलयुग में तो सात जातकों की दो बेर की रोटी ही जुट जावे तो बहुत है। म्हारी बड़ली छोरी छोरा होती तो भी कुछ सहारा लग जाता। इब यो छोरा है छोरिया की पीठ पै। चार साल का तो सारा हुआ है चैत में। इस रींगटे के जवान होते तक तो हम उस लोक की सुध ले रहे होंगे।'

"ऐ ऐसी बात मत कह भरपाई। भगवान तमने सुख दिखावे। पर बहन लड़की की जिंदगानी तो खराब हो जावेगी। आजकल दसमीं ने बूझे कौन है?"

"मन्ने देख ने बहन। मैं तो कती ए अपढ़-मूरख हूँ। के खराब हो गयी मेरी जिंदगानी। जो जिसका भाग। ज्यादा पढ़ना इसके भाग में होता तो किसी लाट के घर में न जनमती?"

औरतों को इन बातों में जरा भी मजा नहीं आ रहा था। सुरजा के स्कूल न भेजे जाने का यह कारण उन्हें कतई तसल्ली नहीं दे रहा था। उनमें से एक ने एक दूसरा दाँव खेला, "बहन, छोरी तो सारे मुहल्ले की होवे है। म्हारा मोहल्ला सहर में आके भी सहरी नहीं है, जो एक-दूसरे के दुख-दर्द में भी काम न आवे। तू चाहवे तो हम सगली थोड़ा-थोड़ा चंदा करके तेरी मदद कर सके हैं। पर पढ़ाई छुड़ाकर उस छोरी का जीवन मत खराब करे।"

भरपाई नासमझ नहीं थी। औरत का निशाना वह समझ रही थी। पर घाव छिपाकर बैठी रही थी। अपनी ही थाली में छेद हो तो कोई दोष किसे दे। ज्यादा बहस करने से बात उघड़ती ही। सौ इधर-उधर की करके उन्हें टाल ही दिया। औरतें जंग में नाकामयाब हुई सेना की तरह निराश लौट गई थीं।

भरपाई ने ऊपर कहा सारा किस्सा कुछ दिनों पहले ही तो मुझे बताया था। भरपाई को मैं भाभी कहता हूँ हालाँकि कहानी की तर्ज पर पूरी बात कहने के लिए ही अब तक उनके नाम का उपयोग किया है।

इस बार बहुत दिनों के बाद गया था मैं उस दिन उनके घर। भाई बालमुकन्द कहीं हवन आदि कराने गए हुए थे। घर पर थे नहीं। पूजा-पाठ, हवन आदि कराना उनके लिए 'पार्ट-टाइम जॉब' की तरह से है। यों वे डाक-तार विभाग में 'सारटर' के पद पर काम करते हैं और 400-450 रुपए महीने के पा ही लेते हैं। छोटा ही सही पर अपना पुश्तैनी घर है, सो किराए के पंजों से बचे हुए हैं। जन्म से ब्राह्मण हैं, सो पूजा-पाठ का काम कर लेने की सुविधा है। इस काम में भले ही लोगों की बहुत श्रद्धा नहीं रह गई है और इसीलिए इस काम को लोग हेय दृष्टि से भी देखते हैं, लेकिन किसी भी कारण से सही, लोग कथा,

बालमुकुन्द जी की अनुपस्थिति में मैं अकसर पानी पीने तक के समय के लिए ही बैठा करता हूँ लेकिन इस बार माहौल ही कुछ ऐसा था कि मुझे देर तक रुकना पड़ा। भाभी सुरजा पर हाथ ही छोड़ने वाली थीं कि मैं पहुँच गया था। थोड़ी देर को तो मेरे समेत सभी स्तब्ध खड़े रह गये थे। जैसे कोई गुनाह करते हुए, एक-दूसरे ने, एक-दूसरे को रँगे हाथों पकड़ लिया हो।

हवन, पूजा आदि कराते ही रहते हैं। ऊपरी कमाई थोड़ी-बहुत भी हो तो भी बंधी कमाई से अच्छी लगा करती है।

बालमुकुन्द जी की अनुपस्थिति में मैं अकसर पानी पीने तक के समय के लिए ही बैठा करता हूँ लेकिन इस बार माहौल ही कुछ ऐसा था कि मुझे देर तक रुकना पड़ा। भाभी सुरजा पर हाथ ही छोड़ने वाली थीं कि मैं पहुँच गया था। थोड़ी देर को तो मेरे समेत सभी स्तब्ध खड़े रह गये थे। जैसे कोई गुनाह करते हुए, एक-दूसरे ने, एक-दूसरे को रँगे हाथों पकड़ लिया हो। लेकिन तभी भाभी फफक-फफककर रो पड़ी थीं। मेरी स्थिति अजीब हो गई थी। थोड़ी देर को असमंजस में खड़ा रहा। बीच में पड़ूँ कि न पड़ूँ। मन हुआ कि लौट चलूँ। घरों में लड़ाई-झगड़े तो होते ही रहते हैं। ऐसे में कौन चाहता है कि कोई बाहर का आदमी चश्मदीद गवाह हो। मैं खुद अपने घर में ऐसे समय किसी की उपस्थिति अधिक बर्दाश्त नहीं कर पाता। लेकिन मैंने ज्यों ही चलने के लिए पाँव लौटाए तो सुरजा लगभग सामने खड़ी हो गई थी। उसका पूरा शरीर मौन था। एकदम जैसे भाँय-भाँय करती जेठ की दोपहरी। लेकिन उसकी आँखों में साफ याचना थी। मानो वह कह रही थीं, 'अभी मत जाइये चाचा जी। आप गए तो थोड़ी देर को रुका तूफान फिर घर को घेर लेगा। माँ मुझे जाने कितना-कितना पीटेंगी।'

मैं सचमुच रुक गया था। खुद भाभी मुझे रोकने की मुद्रा में थीं। मैं ठीक से नहीं कह सकता कि उस समय मैं केवल सुरजा के लिए रुका था या भाभी के लिए या फिर अपनी ही उत्सुकता के लिए।

पूरा तूफान भाभी की आँखों और जुबान पर आ चुका था। उन्हें यह भी होश नहीं था कि मैं जब से आया हूँ, खड़ा ही हूँ। अपने खड़े होने का एहसास खुद मुझे ही अब तक कहाँ था। उस समय अनौपचारिक ढंग से ही पलंग पर बैठने की

औपचारिकता निभा ली थी। भाभी जमीन पर ही बैठ गई थी, टाँगों को पैंतालीस के कोण पर मोड़े हुए। सुरजा मेरे कहने पर भी नहीं बैठी थी। आले के पास दीवार से सटी हुई सहमी-सी चुपचाप खड़ी थी। पर चुप थी नहीं वह। ऐसा न जाने क्यों मुझे लगातार लग रहा था।

छुटकू जाने कब से अपनी पुरानी तिपहिया साइकिल में ठोकाठाकी कर रहा था। जब कोई भी नहीं बोलता था, तो ठोका-पीटी की आवाज एक खास किस्म का असह्य भद्दापन पूरे वातावरण में भर देती थी। ऊँट की कूब-सी आवाज छत से टकरा-टकराकर पूरे कमरे में बिखर जाती थी।

"मैं आपसे के कहूँ बाबूजी, मैं ते आपसे कुछ कह भी न सकूँ हूँ।" भाभी अपनी बात की भूमिका-सी टटोलती हुई, आँखों में बेबसी और आग भरे हुए शुरू हो गई थीं, "इस छोरी ने इसी बात करी है कि मन्ने धरती में भी गड्डन की जगह नहीं मिल रही। आण दो पंडित जी को, इसकी देही ना तुड़वाई तो....।" (इस लड़की ने ऐसी बात की है कि मुझे धरती में भी गड़ने की जगह नहीं मिल रही है। आने दो पंडित जी को, इसकी देह न तुड़वाई तो) भाभी ने यह कहते-कहते सुरजा की ओर भी उसकी नजर बचाते हुए देख लिया था।

मुझे कुछ नहीं समझ आ रहा था। न ही मैं खुद को इस स्थिति में पा रहा था कि उन्हें यह एहसास हो कि मैं बात को कुरेद-कुरेदकर विस्तार में जानना चाहता हूँ। लेकिन भाभी शायद खुद ब खुद सारी घटना बता देने को उत्सुक थीं।

"अब आप अपणे आदमी हो सो लाज-सरम भी छोड़ रही हूँ। सबके सामने तो घर की सारी बातें नहीं कही जावें। तुम ही बताओ यहाँ तक उघाड़ूँगी। भाभी ने लगभग घुटने तक साड़ी को खींचकर छोड़ दिया था, तो सरम मन्ने ही आवेगी ना? तमणे तो नहीं आवेगी ना? अपणे आदमी के सामने ही जी खुला करै है बाबूजी।"

भाभी का सही बात के इर्द-गिर्द इतना अधिक चक्कर लगाना मुझे बहुत ही खलने लगा था। 'शायद ऊबन भी मेरे चेहरे पर आ बैठी थी। भाभी ने भी शायद उसकी झलक ले ली थी। तभी तो उन्होंने कहा था, 'जो बात इस छोरी ने चटाक देने मारी थी, वो बात बताते हुए मेरी तो जीभ भी पाटण ने हो रही है। दुनिया कहवे तो माणस दो दुनिया ने सुणा के, जी हल्का कर सके हैं। पर जिब अपणा बालक और वो भी छोरी इसी बात कर दे, छोरा भी कर दे तो सब हो जाया करें, तो न उगलते बणै हैं न सटकते। इसी बात अपणे आदमी के आगे ही रोई जा सके है। वर्ना दुनिया का क्या है। दुनिया तो रो-रो के पूछेगी, हँस-हँस के उड़ावेगी।'

भाभी थोड़ी देर को चुप हो गई थीं। मेरा सारा ध्यान छुटके की खटा-पटी की भद्दी आवाज ने बँटा लिया था। सुरजा के चेहरे पर उस आवाज से मिलने वाली राहत साफ झलक रही थी। वह आवाज शायद, भयंकर हो सकने वाले वातावरण को कहीं चोट दे रही थी। हालाँकि ऐसा था नहीं। कम से कम अभी तक तो

भाभी का सही बात के इर्द-गिर्द इतना अधिक चक्कर लगाना मुझे बहुत ही खलने लगा था। 'शायद ऊबन भी मेरे चेहरे पर आ बैठी थी। भाभी ने भी शायद उसकी झलक ले ली थी। तभी तो उन्होंने कहा था, जो बात इस छोरी ने चटाक देने मारी थी, वो बात बताते हुए मेरी तो जीभ भी पाटण ने हो रही है।

वातावरण के भयंकर न हो जाने के कोई खास आसार नजर नहीं आ रहे थे। बात को बढ़ाने के लिए मैं कुछ कहने ही वाला था कि भाभी लगभग उसी समय फिर बोलने लगी थीं, "मेरी तो वह गत हो रही है, बाबूजी कि अपणी जाँघ उघाड़े और अपने आप लजावे। जी तो यो चाहवे है कि या तो मैं घर में रहूँ या यो छोरी। पर दोनों में एक भी तो ना हो सके है। यो काल की छोरी, मेरी पैदा की हुई, इसने इसी बात कर दी।" भाभी की आँखों से फिर चिनगारियाँ छूटने लगी थीं।

मेरी आँखों में अब साफ-साफ यह भाव आ गया था कि आखिर बात भी बताओगी कि नहीं? ऐसा क्या कर दिया है सुरजा ने। मुझे यही आशंका थी कि पन्द्रह-सोलह साल की उम्र है इसकी, जरूर कोई गलत कदम उठा बैठी है। किसी आस-पड़ोस के लड़के.... मेरे कुछ आगे सोचने से पहले ही भाभी ने अपनी बात शुरू करके जैसे सोच पर प्रतिबंध लगा दिया था।

"अब तुम ही बताओ बाबूजी, क्या मैं इसका कुछ खाऊँ हूँ, पीऊँ हूँ? क्या मेरी उम्र बीत गई है। मुश्किल से पैंतीस की हुई हूँ। पन्द्रह साल की थी तो ब्याह हो गया था मेरा। सारी जिन्दगानी होम कर दी इनके पालन-पोषण में। आज यो खागड़ी इसी बात करण जोगी होगी है।"

शायद अब मैं पूरी तरह झल्लाने की स्थिति में पहुँच गया था। सारी स्थितियों से जैसे मैं तटस्थ हो जाना चाहता था। पर न जाने कौन-सा सूत्र था, जो इस माहौल में मुझे भागीदार बनाए हुए था।

"पर तकदीर का डाण्डा तो भुगतना पड़े है आदमी को। हम भी भुगत रहे हैं। छोरा भी कह दे तो बर्दाश्त हो जाया करे है। आप तो सब जाणो ही हो बाबूजी। म्हारे पास के धरा है। कोय खेत ना क्यार ना, दुकान ना सुकान ना। एक इज्जत है, ओढ़ लो, चाहे बिछा लो। वो भी अगर न रहवे तो किसा जीणा, किसा मरणा। मैं कोय बुड्ढ़ी-ठेड़री तो हूँ नहीं। पंडित

जी भी चालीस से ऊपर नहीं हैं। पूरा दिन तो दफ्तर में खटे हैं, फिर इनके भौभे भरने के लिए हवन-पूजा को निकल जावे हैं। जिब भी, इननेह हम बोलते-बतलाते ना सुहावे हैं। अब तुम से क्या लकोह (छुपाव) रक्खूँ। रात ने थके-माँदे आये थे पंडित जी। उस भीतर वाले कोठे में जा लेटे। मैं गयी तो बोले, पंडितानी थोड़े पाँव दबा दे। ब्याह के लाए थे सो कह दिया। कोय खता तो नहीं की। बिरबानी हूँ उनकी। मैं पाँव दबाने बैठ गई। ...यो छोरी किते पाणी-वाणी पीवण भीतर आई होगी। तड़के उठते ही न्यू (यूँ) बोली, 'माँ तम अपणे सुख के अलावा भी कुछ सोचा करो हो। आगे ही इतने बालक....' बताओ-बताओ बाबूजी यह बात कहण की थी? और मेरे सुणण की थी? जल क्यूँ ना गयी इसकी जुबान। जरा-सी छोरी और इतनी बड़ी बात। ...बालक हैं तो मेरे हैं। यो तो नहीं पाल देगी। पहलम तो बोल-बतलाने का इतना टेम ही कहाँ मिले है। कदै महीने-दो महीने में बोल-बतला भी लिए तो बाबूजी हमने के गैर-जायज काम कर दिया। आज तक ना मन्ने थारी फिलम देखी ना कोय और शौक पूरा किया। म्हारा बाम्हण तो इतना शरीफ है कि कोई उघाड़ी भी बैठी हो तो अपणी नजर बचा लेवे हैं। और इस छोरी ने ओड़ बात कह दी। आज इन्है (इसने) मैं भी उघाड़ी बना दी।''

''लेकिन भाभी इसमें इतना परेशान होने की बात क्या है। आपकी ही संतान है। अब छोड़ो भी। आजकल का जमाना इन बच्चों का है। इसको ऐसी बात कहनी नहीं चाहिए थी। मुँह से निकल गई होगी।'' मैं सचमुच सकते में था कि सुरजा की जरा-सी बात का भाभी ने इतना पहाड़ क्यों बना दिया था। मैं तो कुछ और ही सोच बैठा था।

''मुँह से निकली किस तरह? यो बात छोटी नहीं है बाबूजी। भोत (बहुत) बड़ी बात है। छोरा भी कहवे तो बर्दाश्त हो जा। इसने छोरी होके इसी बात कही।''

''छोरे को भी नहीं कहनी चाहिए।'' मैंने बात को खत्म करने के लिहाज से कहा।

'छोरे को भी ना करनी चाहिए। पर एक बात कहूँ हूँ। इसने ते छोरी होके इसी बात कह दी। पहलम माँ अपनी बेटियाँ ने दुनियादारी सिखाया करे थीं और ईब यो जमाना आ गया है। के उम्र है इसकी? पन्द्रह बरस ना?'

''पर भाभी, आपकी तो इस उम्र में शादी हो गयी थी।'' मैंने यह वाक्य कहते हुए सुरजा की ओर भी देखा था। सुरजा पहले से भी ज्यादा चुप हो चुकी थी। मेरी बात सुनकर भाभी थोड़ा कटी जरूर लेकिन फिर आवेश में आकर बोलीं, ''आजकल तो तीस-तीस बरस की होके भी ब्याह कराती देखी हैं मन्ने। पर इसको तो अभी से सब ज्ञान है। ऐसी छोरी घर में टिक सके है? इसते बड़ी भी ते बैठी है। इसी ने ज्यादा राम लग रहा है। मुझते लिखवा लो बाबू जी अगर यो घर में टिक ले तै। इसने मुझते इसी बात कही। के मेरी उम्र लिकड़ गयी। बालक हैं तो मेरे हैं। जिसने दिए हैं के वो पालेगा नहीं? सब अपणा-अपणा भाग ले

''पर भाभी, आपकी तो इस उम्र में शादी हो गयी थी।'' मैंने यह वाक्य कहते हुए सुरजा की ओर भी देखा था। सुरजा पहले से भी ज्यादा चुप हो चुकी थी। मेरी बात सुनकर भाभी थोड़ा कटी जरूर लेकिन फिर आवेश में आकर बोलीं, ''आजकल तो तीस-तीस बरस की होके भी ब्याह कराती देखी हैं मन्ने।

के उतरे हैं।''

मुझे मालूम है, भाभी से इस मुद्दे पर बहस करना बहुत मुनासिब नहीं हो सकता था। बात साफ थी कि टूटी हुई आर्थिक स्थितियों के बोझ के नीचे दबी-झल्लाई भाभी इस बात से भी परेशान हैं कि पैंतीस की उम्र में ही वे पैंतालीस की बूढ़ी नजर आने लगी हैं और इस बात से भी कि उनके बिना बताए लड़की को दुनियादारी का ज्ञान है। भाभी को शायद इस बात पर इतना क्रोध नहीं था कि लड़की ने उन्हें रात की घटना को लेकर टोका है, बल्कि इस बात पर था कि लड़की को 'सब ज्ञान है।' भाभी के लिए लड़की के बारे में यह जानकारी उन्हें पूरी तरह हिला देने वाली थी। इसीलिए यह डर उन्हें घर कर गया था कि यह लड़की जरूर कोई गुल खिलाएगी। भाभी उसे लेकर कहीं न कहीं असुरक्षित हो चली थीं। भाभी को इज्जत की पूरी दीवार ढहती नजर आ रही थी। मैं जानता था, भाभी के संस्कारों के लिए यह एक अनहोनी घटना थी। ऐसे में मैंने वही रटा-रटाया वाक्य दोहराना ही ठीक समझा, ''भाभी, इस बात को अब खत्म भी करो। आखिर अपनी बच्ची ही है। और फिर सिवासण (जवान) है। बहुत नासमझी की उम्र तो नहीं है। आजकल जमाना भी तो नासमझी का नहीं है।'' यह कहते-कहते मैं लगभग झटके के साथ ही उठ गया था और चुपचाप खड़ी सुरजा के सामने जा खड़ा हुआ था, ''सुरजा, तुम्हें माँ से ऐसा नहीं कहना चाहिए था। बोलो! नहीं कहना चाहिए था न?''

कई बार यह प्रश्न दोहराने पर भी सुरजा के मुँह से एक लफ्ज नहीं फूटा था। बस मुझे भीतर तक हिला देने वाली निगाह से देखकर आँखें घुमा ली थीं।

सुरजा से मैंने शायद एक गलत सवाल किया था!

संपर्क : 9910177099

चंदन वन का कवि-सम्मेलन

लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव

“अरे नहीं, गजराज भाई, तुमने कोई गलती नहीं की है, तुम तो सदा ही वन्य जीवों एवं इस वन के कल्याण के लिए अच्छी सलाह देते रहते हो।

चंदन वन का राजा शेर सिंह अपनी गुफा में अभी सोकर उठा ही था कि उसके कान में बगल के कस्बे से लाउडस्पीकर की आवाज सुनाई पड़ी कि आने वाले 14 जनवरी मकर संक्रांति के दिन कस्बे के गोल चौराहे पर शाम चार बजे से विशाल कवि सम्मलेन आयोजित किया जाएगा, जिसमें देश के प्रख्यात कवि अपनी कविताओं का पाठ करेंगे। आप सभी से गुजारिश है कि भारी संख्या में आकर कविताओं का आनंद लें। इस अवसर में दिन में मेला भी हर वर्ष की तरह लगेगा।

इस वन से सटे इस कस्बे में नव वर्ष, शिक्षक दिवस, स्वतंत्रता दिवस, गणतंत्र दिवस के अवसर पर कवि सम्मलेन के प्रचार को शेर सिंह अकसर सुनता था। पहले इस वन का विस्तार अधिक था, तब कस्बे में होने वाले आयोजन उतने स्पष्ट तरीके से नहीं सुनाई देते थे पर जब से इस वन को मानवों ने धीरे-धीरे सफाया करना प्रारंभ किया है, तब से वन का क्षेत्रफल कम होता जा रहा था और कस्बे की कुछ हलचल चंदन वन में भी थोड़ी-थोड़ी सुनाई पड़ने लगी थी।

शेर सिंह ने विचार किया कि क्यों न यहाँ चंदन वन में भी एक कवि सम्मलेन मकर संक्रांति के दिन आयोजित किया जाए; पर इसके लिए वन के और लोगों की क्या राय है, यह जानना जरूरी है। शेर सिंह ने इसके लिए सबसे पहले अपने प्रधानमंत्री मल्लू गजराज को बुलवाया।

लगभग दो घंटे बाद मल्लू गजराज हाजिर हुआ और शेर को अभिवादन करते हुए बोला, “महाराज की जय हो, बताइए हुजूर, मुझसे कोई गलती हुई है, जो आपने सूचना मंत्री कालू बंदर से मुझे तुरंत बुलवाया है?”

“अरे नहीं, गजराज भाई, तुमने कोई गलती नहीं की है, तुम तो सदा ही वन्य जीवों एवं इस वन के कल्याण के लिए अच्छी सलाह देते रहते हो। मैंने तुमको इसलिए बुलवाया है कि मेरी इच्छा है कि जिस तरह बगल के कस्बे में विशेष दिवसों पर कवि सम्मलेन होते हैं, उसी तरह इस बार मकर संक्रांति के दिन यहाँ चंदन वन में भी कवि सम्मलेन किया जाए। एक दूसरे से मुलाकात भी होगी और एक-दूसरे की कविता सुनने को मिलेगी।” शेर सिंह ने कहा।

“जी हुजूर, अच्छा विचार है। यह तो बहुत सुंदर आयोजन होगा।” मल्लू गजराज ने कहा।

“तो ठीक है, इस आयोजन के लिए सभी मंत्रियों की एक सभा आज शाम को हो जाए।

सबको शाम को पाँच बजे बुलाया जाए।'' शेर सिंह ने कहा।

शाम को सभी मंत्री शेर सिंह के गुफा में एकत्र हुए और सबने इस सुंदर आयोजन के लिए सहमति दी। आयोजन की जिम्मेदारी प्रधानमंत्री मल्लू गजराज को राजा शेर सिंह ने दे दी।

कवि सम्मलेन के लिए खूब प्रचार-प्रसार हुआ। चंदन वन के सभी जानवर इस कवि सम्मलेन के आयोजन को लेकर खुश थे। सभी मकर संक्रांति की प्रतीक्षा करने लगे।

मकर संक्रांति का दिन आ गया। बड़े टीले पर पूर्व निर्धारित समय दिन के बारह बजे मैदान में जानवर और उनके बच्चे एकत्र हो चुके थे। मंत्रिगण भी आ चुके थे, राजा की प्रतीक्षा हो रही थी। कुछ देर बाद राजा शेर सिंह आ गए। सभी लोग राजा की जयकार किए।

राजा के आसन पर विराजमान होते ही कवि सम्मलेन शुरू हुआ। प्रधानमंत्री गजराज ने कवि सम्मलेन का उद्देश्य बताया और कहा, ''यद्यपि कवि सम्मलेन में मुख्य अतिथि या अध्यक्ष को अंतिम में बुलाया जाता है पर यह आयोजन चंदन वन में पहली बार हो रहा है, तो सबसे पहले इस सम्मलेन के अध्यक्ष राजा शेर सिंह को आमंत्रित करता हूँ, जिससे आप लोग जान सकें कि कविता कैसे कहनी या सुनानी है।''

राजा शेर सिंह खड़े हुए माइक लेते हुए बोले, ''साथियो, मैं कोई कवि नहीं हूँ। पर कुछ पंक्तियाँ बोलता हूँ। अच्छी लगें तो ताली बजाकर मेरा उत्साहवर्धन कीजिएगा।''

मैं इस वन का राजा हूँ,
सदा चाहता हूँ कल्याण।
सभी बढ़ें और प्रगति करें,
चंदन वन की फैले शान।।
काट रहे हैं वन को मानव,
अपने वन की है करनी रक्षा।
यह वन हमको प्राणों-सा प्यारा,
मिलकर करेंगे इसकी सुरक्षा।।
यह वन ही हमारा घर है,
हमको अच्छा लगता है।
विविध वृक्ष और फूल यहाँ,
रहना सच्चा लगता है।।

राजा की इस कविता पर खूब तालियाँ बजीं। सभी ने शेर सिंह का जोर-जोर ताली बजाकर उत्साहवर्धन किया। जानवरों के बच्चे तो खड़े होकर ताली बजाकर नाचने लगे।

संचालक और प्रधानमंत्री मल्लू गजराज ने कविता सुनाने के लिए अगला नाम भोलू भालू का लिया।

भोलू भालू ने राजा को प्रणाम किया और बुलाने के लिए गजराज सिंह को धन्यवाद दिया। भोलू भालू ने अपनी कविता पढ़नी शुरू की-

चंदन वन में वृक्ष सलोने,
रहती जिनसे हरियाली।
फल खाकर भूख मिटे,

मकर संक्रांति का दिन आ गया। बड़े टीले पर पूर्व निर्धारित समय दिन के बारह बजे मैदान में जानवर और उनके बच्चे एकत्र हो चुके थे। मंत्रिगण भी आ चुके थे, राजा की प्रतीक्षा हो रही थी। कुछ देर बाद राजा शेर सिंह आ गए। सभी लोग राजा की जयकार किए।

जीवन की खुशहाली।।
नदी किनारे बहती है,
कल-कल आवाज सुनाती है।
हम मीठा पानी पीते हैं,
नदी प्यास मिटाती है।।

भालू की कविता पर भी जोरदार ताली बजी। सभी को बहुत आनंद आ रहा था। सभी जानवर मन में कविता की पंक्ति बनाने में लगे थे कि पता नहीं, कब उनका नाम पुकार लिया जाए और उन्हें कविता सुनानी पड़े।

अगला नाम चंकी बंदर का आया। चंकी बंदर सीधे न आकर पेड़ों पर कूदते हुए मंच पर पहुँचा। इस तरह बंदर के आने पर सब ताली बजाने लगे। बंदर ने अपनी कविता शुरू की-

पेड़ों पर मैं उछल-कूदकर,
खाता तोड़कर खाता लीची, आम।
अमरूद, बेर, केला, अनार,
तोड़कर खाने में बदनाम।।
वन पर कोई नजर उठाएँ,
मुझको न है मंजूर।
शेर सिंह हमारे राजा,
मेरे वे प्यारे हुजूर।।

चंकी बंदर की कविता पर भी खूब ताली बजी। शेर सिंह भी अपनी प्रशंसा सुनकर खूब ताली बजाई। चंकी बंदर का लड़का चपलू भी मंच पर आ गया और कुछ सुनाने की जिद करने लगा। संचालक गजराज की अनुमति पाकर वह सुनाया-

अल्लम-गल्लम गाना गाऊँ,
घूम-घूमकर मजे उड़ाऊँ।
नदी किनारे नित ही जाऊँ,
मीठे-मीठे फल मैं खाऊँ।

चुल्लू खरगोश, चिल्लू लोमड़ी, मिन्नी बिल्ली, चानू चूहा और कई जानवरों ने अपनी टूटी-फूटी भाषा में कविताएँ सुनाई। किस तरह दो घंटा बीत गया। पता ही नहीं चला। एक-दो जानवर के

बच्चों ने कविता की जगह फिल्मी गाने सुनाए और अंत में चंदन वन में बुद्धिमान माने जाने वाला जिंगल हिरन का नाम पुकारा गया। जिंगल हिरन ने कविता सुनाई-

सुनो भाइयो बात मेरी,
शिक्षा पर भी दो तुम ध्यान।
जागरूक बनेंगे तभी सभी,
होंगे पास हमारे ज्ञान।

खूब ताली बजी। जिंगल हिरन ने कविता के बाद कहा कि मैं कुछ कहना चाहता हूँ। यदि अनुमति हो तो बोलूँ?

गजराज ने कहा, ''हाँ, अनुमति है।''

हिरन ने कहा, ''आज का आयोजन बहुत बढ़िया हुआ है, सबने कविता कही है पर कविताओं में जो यति, गति और लय होनी चाहिए, वह नहीं थी। इसीलिए कविता पढ़ने में उतना अच्छा नहीं लगा, जैसे मनुज लोग पढ़ते हैं। क्या आप लोग यह बात मान रहे हैं।''

सबने हाँ कही। राजा ने पूछा, ''आखिर यह अनोखी बात यति, गति और लय की जो तुम बता रहे हो, यह कैसे हम लोग जान सकेंगे।''

हिरन ने कहा, ''उसका भी उपाय है, महाराज! अच्छी कविता लिखने और सीखने के लिए पहले हिंदी भाषा का ज्ञान, व्याकरण का ज्ञान और छंदों का ज्ञान होना चाहिए। तभी मंच पर जिस तरह मनुज लोग कविता कहते हैं और लिखते हैं, हम भी वैसा ही कर सकते हैं, उसे अच्छे से सीखना होगा। उसके लिए स्कूल खोलने होंगे और बच्चों को शिक्षा देनी होगी, बच्चे अच्छी शिक्षा पा सकेंगे और कवि या लेखक भी बन सकेंगे।''

हिरन ने कहा, ''आज का आयोजन बहुत बढ़िया हुआ है, सबने कविता कही है पर कविताओं में जो यति, गति और लय होनी चाहिए, वह नहीं थी।

''अरे वाह! तुम तो खूब जानकर हो, तुम्हें आज ही मैं शिक्षा और साहित्य मंत्री नियुक्त करता हूँ। तुम चंदन वन के चार दिशाओं में चार स्कूल खोलकर बच्चों को शिक्षा देने का प्रबंध करो और बड़ों के लिए भी हिंदी भाषा, छंद ज्ञान और व्याकरण सिखाने का उपाय करो, मैं भी सीखकर अच्छी कविता, कहानी लिखना चाहता हूँ और उसे सुनाना चाहूँगा। अगले साल फिर से मकर संक्रांति पर हम लोग कविता के गुर सीखकर फिर से शानदार कवि सम्मलेन करेंगे। बच्चे भी कविता सुनाएँगे। आज का कवि सम्मलेन अब समाप्त होता है।'' राजा शेर सिंह ने कहा।

'महाराज की जय... महाराज की जय' बोलकर सब अपने घर चले गए।

संपर्क : मोहल्ला बरगदवा (नई बस्ती), निकट गीता पब्लिक स्कूल,
पोस्ट– मड़वा नगर (पुरानी बस्ती), जिला– बस्ती 272002 (उ. प्र.)
मो.– 7355309428

लघु कथा | डॉ. निर्मल प्रवाल

कभी तो लहर आयेगी

परीक्षा का परिणाम आ गया। कुमार उत्तीर्ण नहीं हुआ। कुमार तीन साल से तैयारी कर रहा था, पर परीक्षा है कि तिलिस्म होती गई। कुमार थक कर अपनी सभी पुस्तकें बोरों में डाल कर स्टोर में रखने की सोच रहा था। अपना स्टडी रूम खाली कर पुस्तकें एक जगह रख ली। कुछ रद्दीवाले को देने के लिए अलग रख ली। पढ़ाई-लिखाई बंद, अब कोई काम-धंधा करेंगे।

शाम को बाबूजी ड्यूटी से घर आए तो कुमार के कमरे की हालत देख असहज हो गए। पत्नी से पूछ तो कुमार का मंतव्य सामने आया।

बाबूजी कुमार को समझाने के लिए उसके कमरे में गए। स्टडी रूम की सूरत बदल चुकी थी। कुमार सिर झुकाए थके हारे यात्री की मानिंद कुर्सी पर बैठा कुछ सोच रहा था। चेहरा मुरझाया पिला सा हो गया। बाबूजी ने कुमार के कंधे पर हाथ रखा और पूछा, ''बेटे कितने अंकों से रह गए?''

कुमार ने कहा ''तीन अंकों से।''

बाबूजी ने समझाते हुए कहा, ''बेटे दो ही प्रश्नों की बात है, एक बार और प्रयास कर लो। इस एक प्रयास के बाद जो होगा वो अच्छा ही होगा। तुम एक साल और अपना सर्वश्रेष्ठ दो। मंजिल अब दूर नहीं।''

कुमार ने बाबूजी की बात मान पुस्तकें वापिस स्टडी रूम में व्यवस्थित कर ली। पढ़ाई में लग गया। दो महीने बाद एक और भर्ती आ गई। कुमार ने आवेदन किया तैयारी में जुट गया। अबकी बार पाठ्यक्रम के प्रत्येक बिंदु का विश्लेषण कर तैयारी कर रहा था। अफवाओं से दूर रहकर खुद पर भरोसा कर लगा हुआ था।

पहले हुई त्रुटियों का ध्यान रखते हुए तैयारी कर रहा था। परीक्षा हो गई। एक दिन परिणाम भी आ गया। कुमार अच्छी मैरिट से उत्तीर्ण हुआ। उसका एक और प्रयास सफल हुआ।

बाबूजी का कथन उसके कानों में गूंज रहा था, ''बैठे रहो, नदिया किनारे कभी तो लहर आयेगी।''

संपर्क : 7690040827

अयोध्या : प्राचीन से अर्वाचीन तक

डॉ. विनोद कुमार सिन्हा
वरिष्ठ स्तंभकार

जैसे स्वर्ग में देवराज इन्द्र ने अमरावती पुरी बसायी थी, उसी प्रकार धर्म और न्याय के बल पर महान राष्ट्र की वृद्धि करने वाले राजा दशरथ ने पहले की अपेक्षा विशेष रूप से बसाया था।

कोसलो नाम मुदितः एकी तो जनपदो महान।
निविष्टः सरयू तीरे, प्रभूतधन धान्यवान।।
अयोध्या नाम नगरी तत्रासी लोकविश्रुता।
मनुना मान्वेन्द्रेण पुरैव निर्मिता स्वयंम्।।

(वाल्मीकि रामायण– बालकांड, सर्ग–5, श्लोक 5–6)

कोसल नाम से प्रसिद्ध एक बहुत बड़ा जनपद है, जो सरयू नदी के किनारे बसा है। वह प्रचुर धन-धान्य से संपन्न, सुखी और समृद्धशाली है। उसी जनपद में अयोध्या नाम की एक नगरी है, जो समस्त लोगों में विख्यात है। उस पुरी को स्वयं महाराज मनु ने बनवाया और बसाया था।

वाल्मीकि ऋषि अयोध्या के संबंध में आगे लिखते हैं-

तां तु राजा दशरथा महाराष्ट्र निवर्धनः।
पुरीमावा सयामास दिवि देवपतिर्यथा।।

(सर्ग–5, श्लोक–9)

जैसे स्वर्ग में देवराज इन्द्र ने अमरावती पुरी बसायी थी, उसी प्रकार धर्म और न्याय के बल पर महान राष्ट्र की वृद्धि करने वाले राजा दशरथ ने पहले की अपेक्षा विशेष रूप से बसाया था।

अयोध्या को कौसल जनपद तथा साकेत भी कहा गया है, गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस के रचना काल के संबंध में लिखा है-

संवत् सोलह से एकतीसा।
करऊँ कथा हरि पद धरि सीसा।।
नौमी सोमवार मधुमासा।
अवधपुरी यह चरित प्रकाशा।।

संवत् 1631 रामनवमी सोमवार तदनुसार 30 मार्च, 1574 को तुलसीदास ने रामचरितमानस की रचना प्रारंभ की थी। ऐसा आचार्य किशोर कुणाल ने माना है। उनके शोधानुसार बालकांड, अयोध्या कांड और अरण्य कांड की रचना अयोध्या के राममंदिर में ही हुई थी। उस समय मंदिर विध्वंस नहीं हुआ था। भारत की अस्मिता, आस्था नेस्तनाबूत करने हेतु सोलहवीं शताब्दी में बाबर ने पूरे उत्तर भारत में मंदिरों पर आक्रमण किया था और उनका विध्वंश कर उनकी जगह मस्जिद बनाई। 1660 में सूबेदार फिदाई खान ने अयोध्या के राममंदिर का विध्वंश किया। तब रामचरितमानस का किष्किंधा कांड, सुंदर कांड, लंका कांड और उत्तरकांड की रचना गोस्वामी तुलसीदास ने काशी में की। बाद में वहाँ पर बाबरी मस्जिद का निर्माण किया गया।

बौद्ध धर्म और जैन धर्म के ग्रंथों में भी अयोध्या का जिक्र आया है। गौतम बुद्ध के समय कोशल के दो भाग थे, बीच में सरयू नदी थी। बहुत दिनों तक बुद्ध भी अयोध्या में रहे थे। बौद्ध धर्म के ग्रंथ संयुक्त निकाय के अनुसार साकेत कोशल साम्राज्य में स्थित था।

जैन धर्म के ग्रंथों के अनुसार जैन धर्म के 5 तीर्थंकर ऋषभनाथ, अजितनाथ, अभिनंदन नाथ, सुमतिनाथ और अनंतनाथ की जन्मस्थली अयोध्या ही थी। मुगलकाल में भले ही अयोध्या के राम मंदिर पर मस्जिद बन गई थी, परंतु अमीर खुसरो ने भी अयोध्या का और भगवान राम का गुणगान किया है। मुगल बादशाहत के समय जब अमीर अली उर्फ हातिम खान अवध प्रदेश का गर्वनर

(राज्यपाल) बना, तब उसने अच्छे व्यवहार एवं नेक स्वभाव के कारण अमरी खुसरो को अपने दरबार में बुला लिया। सन् 1286 से 1288 तक अमीर खुसरो अवध में रहे। उन दिनों अवध प्रदेश की राजधानी अयोध्या ही थी।

जब खुसरो अवध अर्थात अयोध्या आए तो अयोध्यावासियों ने यह कहते हुए उनका स्वागत किया कि भगवान राम की नगरी में आपका स्वागत है, आप सदैव खुश रहें। अपना स्वागत देखकर खुसरो प्रसन्न विभोर हो गए। खुसरो मंदिरों में जाते, भक्तजनों को पूजा करते देखते, उनसे अवधी भाषा जानने की कोशिश करते और अवध की तहजीब समझते। अमीर खुसरो ने जब भक्तजनों से राम की कथा सुनी, तब राम द्वारा अपनाए गए माता-पिता के वचन और आदेश, बड़े भाई और भाभी के प्रति लक्ष्मण की श्रद्धा, रामराज्य में गरीबों-अमीरों का समागम तथा प्रजा के लिए राम का पत्नी त्याग आदि के वे कायल हो गए।

अयोध्या में ही उन्होंने 'मसनवी अस्पनामा' किताब लिखी। उन्होंने राम की जिंदगी को 'अमलपेहम' अर्थात् निरंतर अपनाने योग्य माना। इतना ही नहीं, खुसरो भगवान राम से इतने प्रभावित थे कि बराबर गुनगुनाते रहते थे-

शोखी-ऐ-हिन्दू बर्बी कू दिन ब खुद अज़ ख़ास-ओ-आम।
राम ऐ मन हरगिज ना शुद, हर चन्द गुफ़तम राम-राम।।

हर खास और आम व्यक्ति यह समझ ले कि राम इस सर-जमीन-ए-हिन्द यानी हिन्दुस्तान की एक शोख व शानदार शख्सियत हैं। राम तो मेरे मन या दिल में बसे हैं। वह मुझसे हरगिज़ अलग न होंगे और मैं जब भी बोलूँगा तो राम-राम ही बोलूँगा।

अमीर खुसरो ने अपनी तीसरे दीवान 'गुर्रतुल कमाल' में लिखा है-

"ऐ रब, तू मुझे राम की नगरी जैसी तहजीब दे दे और भगवान श्रीराम जैसा अखलाक यानी शिष्टाचार और मोहब्बत दे, जिससे मैं इस नापाऐदार या खत्म होने वाली दुनिया में अपने अमल से हर गरीब व अमीर में मशहूर हो जाऊँ और तुर्की तहजीब में अयोध्या की तहजीब को मखलून कर जाऊँ यानी मिश्रण कर जाऊँ ताकि मेरा वतन हिन्दुस्तान खुशहाल रहे। अपनी अजीज माँ सैयदा मुबारक बेगम उर्फ माया देवी की तरह मैं अपने वतन की मोहब्बत में डूबकर जब दुनिया को छोड़ूँ तो रामनगरी की खूबसूरती अपने दिल में बसाकर अपने पीर हजरत निजामुद्दीन औलिया के कदमों में जिंदगी की आखिरी साँस लूँ।" (लेख-अवध में अमीर खुसरो के दी साल-ले प्रदीप शर्मा खुसरो, आजकल फारवरी 2023-अंक, पृ.39)

रामायण काल में अयोध्या ने सुख और ऐश्वर्य भी भोगा और दारुण दुःख भी झेला।

बाबरी मस्जिद बनने के बाद 1731 तक हिन्दू और मुस्लिम समुदायों ने लगभग 60 बार से अधिक संघर्ष हुआ।

हमारे प्रथम राष्ट्रकवि मैथिली शरण गुप्त ने अयोध्या के संबंध में कहा था-

जब खुसरो अवध अर्थात अयोध्या आए तो अयोध्यावासियों ने यह कहते हुए उनका स्वागत किया कि भगवान राम की नगरी में आपका स्वागत है, आप सदैव खुश रहें। अपना स्वागत देखकर खुसरो प्रसन्न विभोर हो गए।

देख लो, साकेत नगरी है यही,
स्वर्ग से मिलने गगन में जा रही।
केतु-पट अंचल सदृश हैं उड़ रहे,
कनक-कलशों पर अमर दृग जुड़ रहे।।

स्वर्ग से मिलने जा रही अयोध्या, सुख और ऐश्वर्य की नगरी अयोध्या इन्द्र की अमरावती से भी सुंदर अयोध्या आतंकवादियों और आततायियों के कारण विलखने लगी, सिसकने लगी। मुगल-साम्राज्य के बाद अंग्रेजों का शासन आया। अयोध्या में कोई परिवर्तन नहीं। अंग्रेज तो चाहते ही थे कि भारत में दो संप्रदायों के बीच की लड़ाई चालू रहे और हमारा राज्य कायम रहे। राम मंदिर में ताला लग गया। भारत में पराधीनता की बेड़ी टूट गई, परंतु राम मंदिर की बेड़ी नहीं टूटी।

त्रेता युग की याद दिलाता हुआ राम मंदिर भले ही विवादास्पद हो गया, परंतु आजादी से पहले तीन सौ वर्ष पूर्व तक विभिन्न राजवंशों और भक्तों ने श्रीराम की स्मृतियों को जीवंत बनाए रखा। कनक भवन भी भगवान राम और सीता का प्रसिद्ध मंदिर है, जिसे 1891 में राजा प्रताप सिंह जूदेव ने अपनी महारानी बृषभान कुँवर की इच्छा से बनवाया था।

राम मंदिर विध्वंस के बाद 30 नवंबर, 1858 में खालसा सिखों ने बाबरी ढाँचे पर कब्जा किया और पूजा प्रारंभ की। उसके 27 साल बाद 1885 में राम जन्मभूमि के लिए लड़ाई अदालत पहुँची। निर्मोही अखाड़ा के महंत रघुवर दास ने फैजाबाद के न्यायालय में स्वामित्व को लेकर दीवानी मुकदमा दायर किया।

जब भारत स्वाधीन हुआ तब पुनः मालिकाना हक के लिए 1950 में मुकदमा किया गया। 1951 में पहली बार ताला खोलने का आदेश हुआ और फिर बंद कर दिया गया। एक फरवरी 1986 के दिन फैजाबाद की अदालत ने पुनः ताला खोलने का आदेश दिया और 5:20 शाम में ताले खोल दिए गए। फिर मुस्लिमों ने उस फैसले की चुनौती दी। मुकदमा हाईकोर्ट से गुजरता हुआ सर्वोच्च न्यायालय में पहुँच गया।

इस बीच विहिप ने अक्टूबर 1990 में कार सेवा का आह्वान किया। मुजफ्फरपुर के डॉ. भगवान लाल सहनी के नेतृत्व में जत्था निकला। उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री मुलायम सिंह यादव के आदेश से गोली भी चली। 40 से अधिक

कारसेवक मारे गए।

6 दिसंबर, 1992 उसी दिन सीता जयंती भी थी। शुभ दिन था। लगभग एक लाख कारसेवक उपस्थित थे, जिसमें 25 हजार विवादित परिसर में घुस गए और विवादित ढाँचा गिरा दिया गया। अयोध्या जो बरसों से शोक संतृप्त थी। मुस्कराने लगी। अशोक सिंघल ने कहा, यह मस्जिद नहीं, मंदिर है, इसे अधिक क्षति नहीं पहुँचाओ, तब लोग रुक गए।

इलाहाबाद हाईकोर्ट में जब मुकदमे की सुनवाई हो रही थी, जब आधुनिक सूरदास जगद्गुरु रामभद्राचार्य की गवाही हुई। उन्होंने अदालत में वाल्मीकि रामायण, अथर्ववेद के दशम अध्याय तथा रामचरितमानस की चौपाइयाँ सुनाई। उन्होंने सिद्ध कर दिया कि विवादित परिसर रामजन्म भूमि है। न्यायाधीश ने जगद्गुरु रामभद्राचार्य द्वारा प्रस्तुत 441 साक्ष्य में से 437 साक्ष्य स्वीकृत करते हुए उन्हें 'दिल आत्म' कहा। पुरातत्वविद् के.के. मोहम्मद ने भी दावा किया कि रामजन्म भूमि परिसर के समतलीकरण में एक दर्जन से अधिक पाषाण स्तंभ पर बनी मूर्तियाँ, नक्काशीदार शिवलिंग आदि मिले हैं।

2010 में हाईकोर्ट का फैसला आया कि विवादित भूमि तीन भागों में बाँट दी जाए। रामलला, निर्मोही अखाड़ा और सुन्नी सेंट्रल बोर्ड। इस फैसले से कोई पक्ष संतुष्ट नहीं थे। मामला उच्चतम न्यायालय पहुँचा। 9 नवंबर, 2019 को उच्चतम न्यायालय का फैसला आया, जिसके अनुसार उच्च न्यायालय के फैसले को निरस्त कर दिया गया। सर्वोच्च न्यायालय ने संबंधित स्थल को रामजन्म भूमि माना और 2.77 एकड़ जमीन पर राममंदिर निर्माण का पथ खुल गया।

हमारे आध्यात्मिक युग पुरुष प्रधानमंत्री मोदी जी ने 5 अगस्त, 2020 को मंदिर निर्माण हेतु भूमि-पूजन किया। मंदिर निर्माण प्रारंभ हो गया। 21 जनवरी, 2024 की रात अयोध्या खुशी से आह्लादित होकर ठीक से सो भी नहीं सकी थी। आखिर वह प्रतीक्षा की घड़ी आ गई। कलियुग में त्रेता युग के पदार्पण की घड़ी थी- 22 जनवरी, 2024। 22 जनवरी वह शुभ मुहूर्त था, जब राम मंदिर में नव स्थापित रामलला की मूर्ति की प्राण-प्रतिष्ठा की गई। लगभग एक महीना से अयोध्या में सूर्य भगवान भी कुहासे से आच्छादित थे। शीतलहरी का प्रकोप था। अचानक कुहासे का ताला भी खुला और सूर्य भगवान भी भगवान राम के स्वागतार्थ अपने सप्त अश्व वाले रथ पर सवार होकर आ गए। ऐसा लगता था कि सूर्य भगवान भी अपनी किरणों से भगवान राम का अभिषेक कर रहे हों।

त्रेता युग में भी जब भगवान राम का जन्म हुआ था, तब भी सूर्य भगवान जाना ही भूल गए थे-

मास दिवस कर दिवस मा
मरम न जानहू कोई।
रथ समेत रवि थाकेउ
निसा कवन विधि होई।।

(श्लोक–195, रामचरित मानस–बालकांड)

जब भारत स्वाधीन हुआ तब पुनः मालिकाना हक के लिए 1950 में मुकदमा किया गया। 1951 में पहली बार ताला खोलने का आदेश हुआ और फिर बंद कर दिया गया।

महीने भर का दिन हो गया। इस रहस्य को कोई नहीं जानता। सूर्य अपने रथ सहित नहीं रुक गए, फिर रात किस तरह होगी?

राजनीतिक तुष्टीकरण का कुहाँसा भी छँट गया, जो कमोवेश पाँच सौ वर्षों से अयोध्या की कालिमा के रूप में दिखाई देता था।

सनातन धर्मावलंबियों, विशेषकर रामभक्तों की जीत हुई। दोपहर 12:29:08 से 12:30:32 बजे के बीच 84 सेकेंड के अंतर्गत स्वर्ण सिंहासन की विधि संपन्न हुई। त्रेता में इसी मुहूर्त में भगवान राम का जन्म हुआ था। संपूर्ण देश कुछ विदेश से भी आठ हजार लोग विशेष आमंत्रित थे। चार हजार तो संत-महात्मा उपस्थित थे।

श्रीरामलला का षोडशोपचार पूजा हुई। दही, घी, शर्करा, शहद आदि से भगवान का स्नान कराया गया। चंदन, अक्षत, पुष्प, माला, तुलसी पत्र तथा नाना प्रकार के परिमल द्रव्यों से उन्हें सुसज्जित किया गया।

प्राण-प्रतिष्ठा के उपरांत हमारे यशस्वी प्रधानमंत्री मोदी जी ने अपने भाषण में कहा, "22 जनवरी, 2024 का यह सूरज अद्भुत आभा लेकर आया है। यह एक नए कालचक्र का उद्गम है। हमारे रामलला अब टेंट में नहीं, दिव्य मंदिर में रहेंगे। यह प्राण-प्रतिष्ठा समृद्ध भारत का काल-विंदु है। यह अवसर उत्सव का क्षण तो है ही, भारतीय समाज की परिपक्वता के बोध का भी क्षण है। हमारे लिए यह अवसर सिर्फ विजय का नहीं, बल्कि विनय का भी है।"

अयोध्या की सड़कें चौड़ी हो गईं। अयोध्या जंक्शन का नाम अयोध्या धाम हो गया। अयोध्या में अंतरराष्ट्रीय वायुयान सेवा प्रारंभ हो गई। सभी प्रदेशों से तथा सभी प्रमुख स्थानों से अयोध्या के लिए विशेष गाड़ियाँ चलने लगीं। मात्र अयोध्या नहीं, संपूर्ण भारत में दीवाली मनाई गई। ऐसी शोभा त्रेता युग में हुई थी, जब भगवान राम का राज्याभिषेक हुआ था।

पुर सोभा कछु बरनि न जाई। बहिर नगर परम रुचि राई।।
देखत पुरी अखिल अब भागा। वन, उपवन, वापिका तड़ागा।।

(रामचरित मानस, उत्तर कांड)

संपर्क : ग्राम व पोस्ट– बेलाही, नीलकंठ, वाया–अथरी,
जिला–सीतामढ़ी–84311 (बिहार), मो. : 9934679796

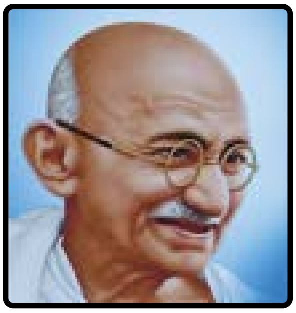

महात्मा गाँधी

हम बचपन से जवानी में आते हैं, तब बचपन से नफ़रत नहीं करते, बल्कि उन दिनों को प्यार से याद करते हैं। बरसों तक अगर मुझे कोई पढ़ाता है और उससे मेरी जानकारी जरा बढ़ जाती है, तो इससे मैं अपने शिक्षक से ज्यादा ज्ञानी नहीं माना जाऊँगा; अपने शिक्षक को तो मुझे मान (इज्जत) देना ही पड़ेगा।

कांग्रेस और उसके कर्त्ता-धर्त्ता

पाठक : आजकल हिन्दुस्तान में स्वराज्य की हवा चल रही है। सब हिन्दुस्तानी आजाद होने के लिए तरस रहे हैं। दक्षिण अफ्रीका में भी वही जोश दिखाई दे रहा है। हिन्दुस्तानियों में अपने हक पाने की बड़ी हिम्मत आई हुई मालूम होती है। इस बारे में क्या आप अपने खयाल बताएँगे?

संपादक : आपने सवाल ठीक पूछा है। लेकिन इसका जवाब देना आसान बात नहीं है। अखबार का एक काम तो है, लोगों की भावनाएँ जानना और उन्हें जाहिर करना, दूसरा काम है लोगों में अमुक जरूरी भावनाएँ पैदा करना और तीसरा काम है लोगों में दोष हो, तो चाहे जितनी मुसीबतें आने पर भी बेधड़क होकर उन्हें दिखाना। आपके सवाल का जवाब देने में ये तीनों काम साथ-साथ आ जाते हैं। लोगों की भावनाएँ कुछ हद तक बतानी होंगी, न हो वैसी भावनाएँ, उनमें पैदा करने की कोशिश करनी होगी और उनके दोषों की निंदा भी करनी होगी। फिर भी आपने सवाल किया है, इसलिए उसका जवाब देना मेरा फर्ज मालूम होता है।

पाठक : क्या स्वराज्य की भावना हिन्दू में पैदा हुई आप देखते हैं?

संपादक : वह तो जब से नेशनल कांग्रेस कायम हुई तभी से देखने में आई है। 'नेशनल' शब्द का अर्थ ही वही विचार जाहिर करता है।

पाठक : यह तो आपने ठीक नहीं कहा। नौजवान हिन्दुस्तानी आज कांग्रेस की परवाह नहीं करते। वे तो उसे अंग्रेजों का राज्य निभाने का साधन (औजार, जरिया) मानते हैं।

संपादक : नौजवानों का ऐसा खयाल ठीक नहीं है। हिंद के दादा दादाभाई नोरौजी ने जमीन तैयार नहीं की होती, तो नौजवान आज जो बातें कर रहे हैं, वह भी नहीं कर पाते। मि. ह्यूम ने जो लेख लिखे, जो फटकारें हमें सुनाईं, जिस जोश से हमें जगाया, उसे कैसे भुलाया जाए? सर विलियम वेडरबर्न ने कांग्रेस का मकसद हासिल करने के लिए अपना तन, मन और धन सब दे दिया था। उन्होंने अंग्रेजी राज्य के बारे में जो लेख लिखे हैं, वे आज भी पढ़ने लायक है। प्रोफेसर गोखले ने जनता को तैयार करने के लिए, भिखारी के जैसी हालत में रहकर, अपने बीस साल दिए हैं। आज भी वे गरीबी में रहते हैं। मरहूम जस्टिस बदरुद्दीन ने भी कांग्रेस के जरिये स्वराज्य का बीज बोया था। यों बंगाल, मद्रास, पंजाब वगैरा में कांग्रेस का और हिंद का भला चाहने वाले कई हिन्दुस्तानी और अंग्रेज लोग हो गए हैं, यह याद रखना चाहिए।

पाठक : ठहरिए, ठहरिए। आप तो बहुत आगे बढ़ गए। मेरा सवाल कुछ और है, आप जवाब कुछ और दे रहे हैं। मैं स्वराज्य की बात करता हूँ और आप परराज्य की बात करते हैं। मुझे अंग्रेजों का नाम तक नहीं चाहिए और आप तो अंग्रेजों का नाम देने लगे। इस तरह तो हमारी गाड़ी राह पर आए, ऐसा नहीं दिखता। मुझे तो स्वराज्य की ही बातें अच्छी लगती हैं। दूसरी मीठी सयानी बातों से मुझे संतोष नहीं होगा।

संपादक : आप अधीर हो गए हैं। मैं अधीरपन बरदाश्त नहीं कर सकता। आप जरा सब्र करेंगे तो आपको जो चाहिए वही मिलेगा। 'उतावली से आम नहीं पकते, दाल नहीं चुरती', यह कहावत याद रखिए। आपने मुझे रोका और आपको हिंद पर उपकार करने वालों की बात भी सुननी अच्छी नहीं लगती, यह बताता है कि अभी आपके लिए स्वराज्य दूर है। आपके जैसे बहुत से हिन्दुस्तानी हों, तो हम (स्वराज्य से) दूर हटकर पिछड़ जाएँगे। वह बात जरा सोचने लायक है।

पाठक : मुझे तो लगता है कि ये गोल-मोल बातें बनाकर आप मेरे सवाल का जवाब उड़ा देना चाहते हैं। आप जिन्हें हिन्दुस्तान पर उपकार करने वाले मानते हैं, उन्हें मैं ऐसा नहीं मानता, फिर मुझे किसके उपकार की बात सुननी है? आप जिन्हें हिंद के दादा कहते हैं, उन्होंने क्या

उपकार किया? वे तो कहते हैं कि अंग्रेज राजकर्त्ता न्याय करेंगे और उनसे हमें हिलमिलकर रहना चाहिए।

संपादक : मुझे सविनय (अदब से) आपसे कहना चाहिए कि उस पुरुष के बारे में आपका बेअदबी से यों बोलना हमारे लिए शरम की बात है। उनके कामों की ओर देखिए। उन्होंने अपना जीवन हिंद को अर्पण (नजर) कर दिया है। उनसे यह सबक हमने सीखा। हिंद का खून अंग्रेजों ने चूस लिया है, यह सिखाने वाले माननीय दादाभाई हैं। आज उन्हें अंग्रेजों पर भरोसा है उससे क्या? हम जवानी के जोश में एक कदम आगे रखते हैं, इससे क्या दादाभाई कम पूज्य हो जाते हैं? इससे क्या हम ज्यादा ज्ञानी हो गए? जिस सीढ़ी से हम ऊपर चढ़े, उसको लात न मारने में ही बुद्धिमानी (अकलमंदी) है। अगर वह सीढ़ी निकाल दें तो सारी निसैनी गिर जाए, यह हमें याद रखना चाहिए। हम बचपन से जवानी में आते हैं, तब बचपन से नफ़रत नहीं करते, बल्कि उन दिनों को प्यार से याद करते हैं। बरसों तक अगर मुझे कोई पढ़ाता है और उससे मेरी जानकारी जरा बढ़ जाती है, तो इससे मैं अपने शिक्षक से ज्यादा ज्ञानी नहीं माना जाऊँगा; अपने शिक्षक को तो मुझे मान (इज्जत) देना ही पड़ेगा। इसी तरह हिंद के दादा के बारे में समझना चाहिए। उनके पीछे हिन्दुस्तानी जनता है, यह तो हमें कहना ही पड़ेगा।

पाठक : यह आपने ठीक कहा। दादाभाई नरौजी की इज्जत करना चाहिए, यह तो समझ सकते हैं। उन्होंने और उनके जैसे दूसरे पुरुषों ने जो काम किए हैं, उनके बगैर हम आज का जोश महसूस नहीं कर पाते, यह बात ठीक लगती है। लेकिन यही बात प्रोफेसर गोखले साहब के बारे में हम कैसे मान सकते हैं? वे तो अंग्रेजों के बड़े भाई-बंद बनकर बैठे हैं, वे तो कहते हैं कि अंग्रेजों से हमें बहुत कुछ सीखना है। अंग्रेजों की राजनीति से हम वाकिफ हो जाएँ, तभी स्वराज्य की बातचीत की जाए। उन साहब के भाषणों से तो मैं ऊब गया हूँ।

संपादक : आप ऊब गए हैं, यह दिखाता है कि आपका मिजाज उतावला है। लेकिन जो नौजवान अपने माँ-बाप के ठंडे मिजाज से ऊब जाते हैं और वे (माँ-बाप) अगर अपने साथ न दौड़ें तो गुस्सा होते हैं, वे अपने माँ-बाप का अनादर करते हैं, ऐसा हम समझते हैं। प्रोफेसर गोखले के बारे में भी ऐसा ही समझना चाहिए। क्या हुआ अगर प्रोफेसर गोखले हमारे साथ नहीं दौड़ते हैं? स्वराज्य भुगतने की इच्छा रखने वाली प्रजा अपने बुजुर्गों का तिरस्कार नहीं कर सकती। अगर दूसरे की इज्जत करने की आदत हम खो बैठे, तो हम निकम्मे हो जाएँगे। जो प्रौढ़ और तजर्बेकार हैं, वे ही स्वराज्य भुगत सकते हैं, न कि बे-लगाम लोग और देखिए कि जब प्रोफेसर गोखले ने हिन्दुस्तान की शिक्षा के लिए त्याग किया, तब ऐसे कितने हिन्दुस्तानी थे? मैं तो खास तौर पर मानता हूँ कि प्रोफेसर गोखले जो कुछ भी करते हैं, वह शुद्ध भाव से और हिन्दुस्तानी का हित मानकर करते हैं। हिंद के लिए अगर अपनी जान भी देनी पड़े तो वे दे देंगे, ऐसी हिंद के लिए उनकी भक्ति है। वे जो कुछ कहते हैं, वह किसी की खुशामद करने के लिए नहीं, बल्कि सही मानकर कहते हैं। इसलिए हमारे मन में उनके लिए पूज्य भाव होना चाहिए।

आप ऊब गए हैं, यह दिखाता है कि आपका मिजाज उतावला है। लेकिन जो नौजवान अपने माँ-बाप के ठंडे मिजाज से ऊब जाते हैं और वे (माँ-बाप) अगर अपने साथ न दौड़ें तो गुस्सा होते हैं, वे अपने माँ-बाप का अनादर करते हैं, ऐसा हम समझते हैं। प्रोफेसर गोखले के बारे में भी ऐसा ही समझना चाहिए।

पाठक : तो क्या वे साहब जो कहते हैं, उसके मुताबिक हमें भी करना चाहिए?

संपादक : मैं ऐसा कुछ नहीं कहता। अगर हम शुद्ध बुद्धि से अलग राय रखते हैं, तो उस राय के मुताबिक चलने की सलाह खुद प्रोफसेर साहब हमें देंगे। हमारा मुख्य काम तो यह है कि हम उनके कामों की निंदा न करें; हमसे वे महान हैं, ऐसा मानें और यकीन रखें कि उनके मुकाबले में हमने हिंद के लिए कुछ भी नहीं किया है। उनके बारे में कुछ अखबार जो अशिष्टतापूर्व लिखते हैं, उसकी हमें निंदा करनी चाहिए और प्रोफेसर गोखले जैसों को हमें स्वराज्य के स्तंभ मानना चाहिए। उनके खयाल गलत और हमारे ही सही हैं या हमारे खयालों के मुताबिक न बरतने वाले देश के दुश्मन हैं, ऐसा मान लेना बुरी भावना है।

पाठक : आप जो कुछ कहते हैं, वह अब मेरी समझ में कुछ आता है, फिर भी मुझे उसके बारे में सोचना होगा। पर मि. ह्यूम, सर विलियम वेडरबर्न वगैरह के बारे में आपने जो कहा, उसमें तो हद हो गई।

संपादक : जो नियम हिन्दुस्तानियों के बारे में है, वही अंग्रेजों के बारे में समझना चाहिए। सारे के सारे अंग्रेज बुरे हैं, ऐसा तो मैं नहीं मानूँगा। बहुत से अंग्रेज चाहते हैं कि हिन्दुस्तान को स्वराज्य मिले। उस प्रजा में स्वार्थ ज्यादा है यह ठीक है, लेकिन उससे हर एक अंग्रेज बुरा है, ऐसा साबित नहीं होता। जो हक-न्याय चाहते हैं, उन्हें सबके साथ न्याय करना होगा। सर विलियम हिन्दुस्तान का बुरा चाहने वाले नहीं हैं, इतना हमारे लिए न्याय करना होगा। सर विलियम हिन्दुस्तान का बुरा चाहने

वाले नहीं हैं, इतना हमारे लिए काफी है। ज्यों-ज्यों हम आगे बढ़ेंगे त्यों-त्यों आप देखेंगे कि अगर हम न्याय की भावना से काम लेंगे, तो हिन्दुस्तान का छुटकारा जल्दी होगा। आप यह भी देखेंगे कि अगर हम तमाम अंग्रेजों से द्वेष करेंगे, तो उससे स्वराज्य दूर ही जाने वाला है; लेकिन अगर उनके साथ भी न्याय करेंगे, तो स्वराज्य के लिए हमें उनकी मदद मिलेगी।

पाठक : अभी तो ये सब मुझे फिजूल की बड़ी-बड़ी बातें लगती हैं। अंग्रेजों की मदद मिले और उससे स्वराज्य मिल जाए तो आपने दो उलटी बातें कहीं। लेकिन इस सवाल का हल अभी मुझे नहीं चाहिए। उसमें समय बिताना बेकार है। स्वराज्य कैसे मिलेगा, यह जब आप बताएँगे, तब शायद आपके विचार मैं समझ सकूँ तो समझ सकूँ। फिलहाल तो अंग्रेजों की मदद की आपकी बात ने मुझे शंका में डाल दिया है और आपके विचारों के खिलाफ मुझे भरमा दिया है। इसलिए यह बात आप आगे न बढ़ायें तो अच्छा हो।

संपादक : मैं अंग्रेजों की बात को बढ़ाना नहीं चाहता। आप शंका में पड़ गए, इसकी कोई फिकर नहीं। मुझे जो महत्त्व की बात कहनी है, उसे पहले से ही बता देना ठीक होगा। आपकी शंका को धीरज से दूर करना मेरा फर्ज है।

पाठक : आपकी यह बात मुझे पसंद आयी। इससे मुझे जो ठीक लगे, वह बात कहने की मुझमें हिम्मत आई है। अभी मेरी एक शंका रह गई है। कांग्रेस के आरंभ से स्वराज्य की नींव पड़ी, यह कैसे कहा जा सकता है?

संपादक : देखिये, कांग्रेस ने अलग-अलग जगहों पर

> मैं अंग्रेजों की बात को बढ़ाना नहीं चाहता। आप शंका में पड़ गए, इसकी कोई फिकर नहीं। मुझे जो महत्त्व की बात कहनी है, उसे पहले से ही बता देना ठीक होगा।

हिन्दुस्तानियों को इकट्ठा करके उनमें 'हम एक राष्ट्र हैं' ऐसा जोश पैदा किया। कांग्रेस पर सरकार की कड़ी नजर रहती थी। महसूल का हक प्रजा को होना चाहिए, ऐसी माँग कांग्रेस ने हमेशा की है। जैसा स्वराज्य कनेडा में है, वैसा स्वराज्य कांग्रेस ने हमेशा चाहा है। वैसा स्वराज्य मिलेगा या नहीं मिलेगा, वैसा स्वराज्य हमें चाहिए या नहीं चाहिए, उससे बढ़कर दूसरा कोई स्वराज्य है या नहीं, यह सवाल अलग है। मुझे दिखाना तो इतना ही है कि कांग्रेस ने हिन्दू को स्वराज्य का रस चखाया। इसका जस कोई और लेना चाहे तो वह ठीक न होगा और हम भी ऐसा मानें तो बेकदर ठहरेंगे। इतना ही नहीं, बल्कि जो मकसद हम हासिल करना चाहते हैं, उसमें मुसीबतें पैदा होंगी। कांग्रेस को अलग समझने और स्वराज्य के खिलाफ मानने से हम उसका उपयोग नहीं कर सकते।

(भाग–प्रथम)

लोकतंत्र का
पाँचवाँ स्तंभ
सकारात्मक चिंतन एवं विकास का संवाहक

पी.टी. 62/20 कालकाजी, नई दिल्ली-19
मोबाईल नं.: 9868010452

(मासिक पत्रिका) का सदस्यता फार्म

पूरा नाम ....
पता ....
....
फोन .... मोबाइल .... ई–मेल ....

सदस्यता वार्षिक ₹220, पांच वर्षीय ₹1000, आजीवन ₹2500

सदस्यता राशिः ₹.................... नकद/मनीऑर्डर/ड्राफ्ट क्रमांक .... दिनांक ....

कृपया सदस्यता राशि मनीऑर्डर/ड्राफ्ट "Panchwa Stambh" (पाँचवाँ स्तंभ) के नाम पी.टी 62/20 कालकाजी, नई दिल्ली–110019 के पते पर भेजे।

RTGS/NEFT के लिए "Panchwa Stambh", Central Bank Of India A/c No. 3504660941, IFSC Code: CBIN0280308, Branch Name: Kalkaji, New Delhi-19 के खाते में जमा कर सूचित करें।

स्थान .... दिनांक .... हस्ताक्षर ....

(प्रिय पाठको, यह आपके प्रेम का ही परिणाम है कि आज पाँचवाँ स्तंभ पत्रिका देश के 28 राज्यों में पहुंच रही है और निरंतर आपकी सराहना मिल रही है। आपसे अनुरोध है आप इसका स्वयं सदस्य बनें एवं अपने इष्ट मित्रों को भी सदस्य बनायें।)

किस्त-दर-किस्त

शिक्षा के धर्म का पालन हो

संजय कुमार मिश्र
M 0997 1189 229

यह किसी से छुपा हुआ नहीं है कि ज्यादातर मदरसों में बुनियादी शिक्षा की जगह कट्टर इस्लाम की तोतारटंत शिक्षा देकर उसे कट्टरता, आतंकवाद, अंधविश्वास और कूपमंडुकता के गहरे गर्त में बड़ी सोची-समझी रणनीति के तहत ढकेला जाता रहा है।

मौजूदा समय में धर्म रिलीजन या पंथ के अर्थ में प्रचलित हो गया है। धर्म शब्द का उद्भव ही सनातन संस्कृति या जीवन पद्धति से है, जिसका अर्थ 'कर्तव्य' होता है। धर्म का अर्थ है : व्यक्ति का वास्तविक स्वाभाविक कर्तव्य, जो धारण करने योग्य है, वही धर्म है। 'धारयति इति धर्मः।' सनातन सभ्यता में 'धर्म' शब्द बहुत ही व्यापक रूपों में उपयोग में लिया जाता रहा है। जैसे कि मानवधर्म, राजधर्म वर्णाश्रम धर्म, पितृधर्म, पुत्रधर्म, नदीधर्म, वृक्षधर्म, पृथ्वीधर्म, समाज धर्म, राजनीति का धर्म, शिक्षा का धर्म इत्यादि। इससे हमें धर्म का सामान्य अर्थ ज्ञात होता है कि 'विविध परिस्थितियाँ या सन्दर्भ में अपने-अपने कर्त्तव्य करने चाहिए। इस अर्थ में अनेक पंथों का भी अपना-अपना कर्तव्य या धर्म होता है।

शिक्षा के धर्म को सिर्फ विष्णुपुराण के एक श्लोक से जाना जा सकता है, यथा-

तत्कर्म यन्न बन्धाय सा विद्या या विमुक्तये।
आयासायापरं कर्म विद्यान्या शिल्पनैपुणम्।।

अर्थात् कर्म वही है, जो बंधनों से मुक्त करे और विद्या वही है, जो मुक्ति का मार्ग दिखाए। इसके अतिरिक्त जो भी काम हैं, वे सब निपुणता देने वाले मात्र हैं। अब प्रश्न यह उठता है, किससे मुक्ति? तो उत्तर है अहम् से, अज्ञान से, कर्मों से, दुर्गुणों से, अन्धविश्वास से, हर वह विषय जो आपको बाँधता हो किसी परिधि में, जिससे कि आप कूपमण्डूक की भाँति उस परिधि के बाहर ना देख सकें, उन सभी विषयों से मुक्ति है विद्या, और यह विद्या का अध्ययन जीवनपर्यन्त चलता रहता है।

इसके उलट हमारे देश में धर्म की शिक्षा, यानी धार्मिक शिक्षा की बात पर शोर-शराबा मचा रहता है। जब धार्मिक शिक्षा की बात की जाती है तो वह शिक्षा के धर्म के अर्थ में न होकर रिलीजन अर्थात् किसी खास पंथ की शिक्षा की बात की जाती है। किसी खास पंथ या संप्रदाय के बारे में जानना या उसके सिद्धांतों पर अमल करना कोई बुरी बात नहीं है और हर एक संप्रदाय के लोगों को इस बारे में ज्ञान हासिल करना ही चाहिए, बल्कि इससे बढ़कर हरेक व्यक्ति को दूसरे संप्रदायों के उपदेशों या शिक्षाओं में जो ग्रहण योग्य है, उसे अपनाना भी चाहिए।

दिक्कत तो तब आती है जब दुधमुँहे शिशु को बुनियादी शिक्षा का ज्ञान दिए बगैर उसे अपने पंथ या संप्रदाय की किताबों का सीधे तोतारटंत कराया जाता है। आजीवन एक खास विचार और अंधविश्वासों की जकड़न में कसकर उसे अंधकूप में ढकेल दिया जाता है। वह आजीवन उसी रटे-रटाए विचार पर चलता है और पूरे देश, समाज और दुनिया को उसी पर चलाने के लिए कुछ भी करने को तैयार रहता है। उसमें वैचारिक या सामाजिक विविधता के लिए कोई जगह नहीं होती। अपने खास संप्रदाय में शामिल करने और उसपर आचरण के लिए हत्या, खूनखराबा, निरिह बच्चों और महिलाओं से अमानुषिक व्यवहार उसके लिए सब जायज है।

यह किसी से छुपा हुआ नहीं है कि ज्यादातर मदरसों में बुनियादी शिक्षा की जगह कट्टर इस्लाम की तोतारटंत शिक्षा देकर उसे कट्टरता, आतंकवाद, अंधविश्वास और कूपमंडुकता के गहरे गर्त में बड़ी सोची-समझी रणनीति के तहत ढकेला जाता रहा है और समाज, सरकार या न्यायालयों द्वारा उसमें जैसे ही सुधार की बात की जाती है तो कठमुल्लों और स्वार्थी सांप्रदायिक नेताओं द्वारा अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर हमला तथा इस्लाम पर आक्रमण का शोर मचाया जाने लगता है। देवबंद एवं अनेक कट्टरपंथी संस्थानों से निकले तालिबानी, आईएसआईएस और अलकायदा के लड़ाकों ने पूरी दुनिया को एक ही सांप्रदायिक रंग में रँगने के लिए कितना कहर बरपाया है और अब भी बरपा रहे हैं, जिसमें भारत समेत पूरी दुनिया त्रस्त है।

केन्द्र सरकार और उत्तर प्रदेश की योगी सरकार ने ऐसे कदम उठाए हैं, जिसके कारण प्रदेश भर के गैर-सहायता प्राप्त मदरसों में बच्चों को पढ़ने की सामान्य सुविधाएँ और कुरान के सिवा हिन्दी, अंग्रेजी, विज्ञान, कंप्यूटर आदि का बुनियादी ज्ञान हासिल करें, जिससे कि उनका मानसिक विकास और वे रोजगार आदि पाने के लायक बन सके।

आज समय की माँग है कि हर पंथ और जाति के बच्चों को सरकारी या सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त स्कूलों में प्रवेश दिया जाए, जहाँ उन्हें बुनियादी या आधारभूत शिक्षा, जिसमें देश की भाषा, सामूहिक संस्कृति, इतिहास, संविधान और विज्ञान के साथ-साथ सभी पंथों के उच्च आदर्शों का नैतिक ज्ञान दिया जाए, ताकि वे एक योग्य, विवेकी और तर्कशील नागरिक के साथ-साथ एक आदर्श इनसान भी बन सकें। बुनियादी सामान्य शिक्षा का एक स्तर प्राप्त करने के बाद वह उस मानसिक स्थिति में होगा, जब विद्यार्थी यह फैसला कर सकता है कि किसी खास पंथ की विशेष शिक्षा की उसे जरूरत है अथवा नहीं? अगर उसे जरूरी लगेगा तो वह अपने खुले नजरिये से गहराई से उसका अध्ययन कर सकता है, ताकि उसके मूल तथ्यों की गहराई तक पहुँच सके। यहाँ तक कि चाहे तो वह मौलवी, पुरोहित या किसी पंथ का पुजारी या उपदेशक भी बन सकता है।

भारत समेत पूरी दुनिया के बच्चों को किसी पांथिक धर्म की शिक्षा की नहीं, बल्कि शिक्षा के धर्म के अनुरूप चलने की आवश्यकता है। शिक्षा के धर्म को आत्मसात् करने वाले ही सही मायने में धार्मिक होते हैं। ©पाँ.स्तं

साथी की गतिविधियाँ

साथी संस्था द्वारा जनता कैंप, प्रगति मैदान, दिल्ली में बाढ़ से पीड़ीत गरीब बच्चों, महिलाओं एवं पुरुषों को कपड़े एवं खाद्य साम्रगी वितरण किया गया। (2023)

साथी की कार्यकारिणी बैठक में साथी की गतिविधियों पर चर्चा एवं पूर्णिमा सेठी पार्क में ''मेरा देश मेरा माटी'' योजना के तहत पौधरोपण के दौरान पाँचवाँ स्तंभ पत्रिका के साथ। (2023)

साथी संस्था द्वारा बाल विकास विद्यालय, सिद्धार्थ एक्टेंशन, दिल्ली में टिचर्स डे सेलिब्रेशन के मौके पर बच्चों को प्रेरक कहानियों का बुक, स्टेशनरी के सामान एवं बच्चों को जूस, बिस्किट एव खाद्य साम्रगी वितरण किया गया। (2023)

साथी की कार्यकारिणी बैठक में साथी की गतिविधियों पर मिनट–टू–मिनट तथा संस्था की कार्ययोजनाओं के बारे में चर्चा एवं पूर्णिमा सेठी पार्क में ''एक पेड़ माँ के नाम तथा ''स्वच्छता पखवाड़ा'' के दौरान पौधरोपण। (2024)

साथी संस्था द्वारा ओल्ड ऐज होम, साहनी फाउंडेषन, मलिकपुर कोहली, रंगपुरी, दिल्ली में ''प्रीति भोज'' का आयोजन किया गया। साथ 5100 रुपए की सहायता राषि के साथ वृद्धाश्रम में रह रहे बुजुर्गों को धार्मिक, सामाजिक पुस्तक दिया गया। (2024)

13. साथी संस्था द्वारा 05 जून, 2024 को ''विश्व पर्यावरण दिवस' के मौके पर कालकाजी स्थित नेहरू एन्क्लेव पार्क में वृक्षारोपण के दौरान ''प्रकृति तो हमारी केयर करती है पर प्रकृति का केयर/संरक्षण कैसे करें और क्या करना चाहिए'' विषय पर गोष्ठी आयोजित किया गया। (2024)

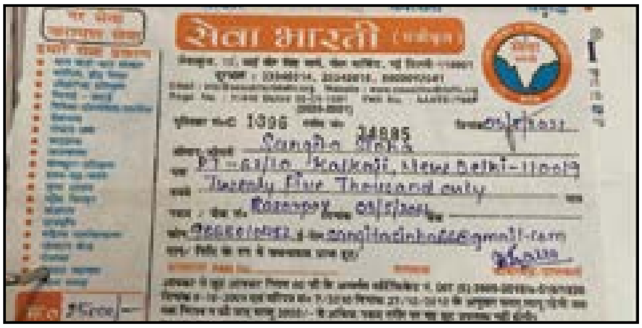
सेवा भारती

साथी संस्था की कोषाध्यक्ष श्रीमती संगीता सिन्हा द्वारा विगत 21 वर्षों से सामाजिक क्षेत्रों में कार्य कर रही ''सेवा भारती'' गोल मार्केट को 25 हजार रुपए का सहयोग दिया। (2021)

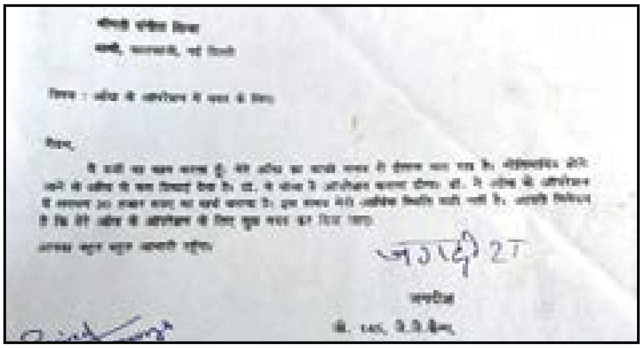

जगदीश टेलर को मोतियाबिंद ऑपरेशन के लिए मदद के रूप धनराशि दिया गया। जगदीष टेलर के तरफ से धन्यवाद पत्र (2023)

POSTAL REGD. NO. DL(S)-01/3287/2019-21
RNI NO. DELHIN/2006/18597